संयोगी के पूर्व का और पादान्त का अक्षर भी गुरुसंज्ञक है, परन्तु यह ध्यान रहे कि पादान्तस्थ और प्र, ह्र, के पूर्व का वर्ण विकल्प से गुरु माना गया है, अभिप्राय यह कि कहीं गुरु माना जाता है और कहीं नहीं।

## एक-मात्रक तथा द्वि-मात्रक का चिन्ह ॥

सूधी रेखा (।) लघु समुझि, गुरु शुक-चञ्चु (ऽ) अकार।
इनमें वरतें छन्द सब, जे कवि बुद्धि उदार ॥(श्रीकेशवोक्त दोहा)

## गण विचार * ॥

"मगन" त्रिगुरुयुत त्रिलघुमय † "केशव" "नगन" प्रमान।
"भगन" आदिगुरु, आदिलघु "यगन" वखानि सुजान ॥

---

* पिङ्गल प्रथमाध्याय आरम्भ के ८ सूत्रों में गण नाम पूर्वक निम्नोक्त प्रकार आठ ही गणों का स्वरूप जतलाया है—( १ ) धी श्री स्त्री-म्। ( २ ) वरा सा-य्। ( ३ ) का गु हा-र्। ( ४ ) वसुधा-स्। ( ५ ) सा ते क-त्। ( ६ ) कदा स-ज्। ( ७ ) किं वद-भ्। और ( ८ ) नहस-न्। सारांश यह है कि "धी, श्री और स्त्री" सूत्रस्थ इन तीन ही वर्ण में दीर्घ ई की मात्रा होने से यह मगण है अन्त का "म्" गण का नाम सूचित करता है, इसी भांति अन्य यगणादि भी जानने योग्य हैं।

† संयोगी के आदि युत, कबहुंक वर्ण विचार।
"केशवदास" प्रकाशवश, लघु कर ताहि निहार ॥

"जगन" मध्य गुरु जानिये, "रगन" मध्य लघु होय ।
"सगन" अन्त गुरु, अन्त लघु "तगन" कहैं सब कोय ॥

## अनुप्रास अर्थात् तुक क़ाफ़िया ॥

### अन्त्यानुप्रास का उदाहरण ।

( शिखरिणी छन्द वर्षावर्णन )

घटा काली काली, हरित तृण छायो मन हरे ।
नदी चाली चाली, पिय सदन ही की सुधि करे ॥
भली लाली लाली, सुमन सरिता में बन रही ।
उदासी क्यों ? माली ! प्रभु समय दीन्ही मन चही ॥

जानना चाहिये कि अन्त्य अर्थात् पादान्त भाग में "हरे, करे, रही, चही" ये अनुप्रास हैं ।

### पदान्तानुप्रास का उदाहरण ॥

दोहा ॥

अजर, अमर, दिनकर, भवर, विश्वम्भर, हर, सार ।
"किङ्कर" शङ्कर, सुमिर, नर ! अखिलेश्वर, करतार ॥

अर्थात् अजर और अमरादि पदों में अनुप्रास है ।

## यति ॥

जिह्वा के नियत विश्राम स्थान को "यति" कहते हैं । विच्छेद और विराम भी इसके नाम हैं ।

## दोहा ॥

इस छन्द के प्रथम चरण में १३ दूसरे में ११ और इसी प्रकार तीसरे व चौथे चरण में १३ । ११ का नियम है । पूर्वकाल में यह अटल नियम नहीं था किन्तु श्री-विहारीलाल के समय में ही १३ और ११ मात्रा से न्यूना-धिक मात्रा के छन्द बने हैं, परन्तु अब यह १३ । ११ का नियम अचल आदेश सा होगया है । दोहे के कई उदाहरण पहिले आ ही चुके हैं ।

## सोरठा ॥

इस छन्द के प्रथम और तीसरे चरण में ग्यारह २ मात्रा और दूसरे व चौथे चरण में तेरह २ मात्रा होती हैं । दोहे को उलट कर पढ़ने से सोरठा हो जाता है । जैसे:—

**विश्वम्भर हरसार, अजर अमर दिनकर प्रवर ।**
**अखिलेश्वर करतार, "किंकर" शंकर सुमिर नर ॥**

## कुण्डली ॥

यह छन्द ९६ मात्रा का होता है । उदाहरण:—

उर अन्तर धुँधुवाय, जरे ज्यों कांच कि भट्टी ।
जरिगा लोहू मांस, रहिगई हाड़ कि टट्टी ।
कह गिरिधर कविराय, सुनो रे मेरे मिन्ता ।
वे नर कैसे जियें, जाहि तन व्यापै चिन्ता ॥

## चौपाई ॥

भाषाभास्कर के कर्त्ता काशीनगर के पादरी एथरिङ्गटन साहिव ने कहा है "कि चतुष्पदा (चौपाई) छन्द उसे कहते हैं जिसमें १६ मात्रा हों और उसके आदि अन्त में लघु दीर्घ का नियम न हो" तथा एक संस्कृत भाषा का कवि कहता है* "कि इस पज्झटिका के प्रत्येक पाद में १६ मात्रा और पादान्त में गुरु वर्ण होने का नियम है" तथा छन्द भर में जगण नहीं आना चाहिये और नवां अक्षर गुरु रखना योग्य है। अभिप्राय यह है कि पज्झटिका से भी इसका स्वरूप वहुत अंश में मिलता है तथा श्री-रघुवरदयालु सम्पादित "चंडी" † छन्द से भी इसका न्यून कक्षा का नाता नहीं है, परन्तु हमको भाषाभास्करकार का ही मत रुचता है। उदाहरण:—

उठो उठो शिशु रात वितानी, कानन कुसुम कली विकसानी।
पंछी धुन कर रहे विरछ बसि, सूर्य उदय सब गयो तिमिर नसि।

(श्रीराधाचरण गोस्वामी)

---

*प्रतिपद यम कित षोडश मात्रा। नवम गुरुत्व विभूषित गात्रा॥
पज्झटिका पुनरत्र विवेकः। क्वापि न मध्य गुरुर्गण एकः॥

† लघु वसु वरण सु राम सवाँरी, पुनि जलगण पद अन्त विचारी।
यहि विधि चतुर प्रबन्ध अखंडी, भनत सकल कवि ताहि सुचंडी।

गुजराती भाषा के चतुर्थ पुस्तक में इसके विषय में लिखा है "कि प्रथम लघु करी ने पछी तेनी जोड़े मगण लाववो नहीं, तथा प्रथम बे मात्राओ पछी यगण लाववो नहीं, तथा प्रथम लघु अने गुरु अक्षर करीने तेनी जोड़े सगण लाववो नहीं" परन्तु यह अन्तिम मत एक देशी है।

## छप्पै ॥

छप्पै छन्द के ६ पाद होते हैं। जिनमें से ११ और १३ मात्रा अर्थात् २४ मात्रा के तो ४ पाद होते हैं और अन्त के २ पाद १५ और १३ इस प्रकार २८–२८ मात्रा के होते हैं *। उदाहरण:—

आरज कुल के भानु, भानुकुलकीरत कारन।
रैयत हित अति घनो, चित्त में कीन्हें धारन॥
नगर नगर जो चहत, कियो विद्यापरचारन।
उदय नगर में कियो, अद्भुतालय को थापन॥

---

* लघु दीरघ नहिं नेम, मत्त चौवीस करीजै।
ऐसे ही तुक सार, धार तुक चार भरीजै।
नाम रसावल होय, और वस्तू कमि जानहु।
उल्लाला की विरत, फेर तिथ तेरह आनहु॥
द्वै तुक बनाओ अन्त की, यत यत में अठ वीस गहु।
सुन गरुड़ पंख पिंगल कहै, छप्पै छन्द कवित्त यहु।

नृप फतहसिंह नरपाल-मणि, सहित कुटुंब राजी रहैं।
अजमेर अनाथ समाज के, बालक यह प्रभु से चहैं ॥

## कामदण्डक ॥

सर्वसाधारण मनुष्य इसको कवित्त का एक भेद कहते हैं। इस छन्द के एक चरण में ३१ वर्ण होते हैं और आठ आठ फिर भी आठ तथा पुनः ७ अक्षर पर विश्राम होता है। उदाहरण:—

एक सास खाली मत, खोय लो खलक बीच,
कीचरु कलंक अङ्क, धोय लै तो धोय लै।
उर अंधियार पाप, पूर सों भर्‌यो है तामें,
ज्ञान की चिरागें चित्त, जोय लै तो जोय लै।
मिनखा जनम बार, बार ना मिलैगो मूढ़,
पूरण प्रभु से प्यारो, होय लै तो होय लै।
देह च्रणभंग या में, जनम सुधारिबो सो,
बीज कै भमंकै मोती, पोय लै तो पोय लै ॥

## अनुष्टुप् ॥

"छन्दरत्नमाला" कार श्रीरघुवरदयालुजी अनुष्टुप् छन्द का इतना ही लक्षण मानते हैं कि इसके प्रत्येक

चरण में आठ आठ अक्षर हों *, परंतु इन दिनों इसका अधिक प्रचार पाया हुआ लक्षण इस प्रकार है "कि चारों ही चरण में छठा अक्षर गुरु और पांचवां लघु तथा दूसरे आर चौथे चरण में सातवां अक्षर लघु तथा पाहिले और तीसरे चरण का सातवां अर्क्षर दीर्घ" उदाहरण:—

श्लोके छट्ठा गुरू धारो, सर्व में लघु पांचवां।
आदि तीजे गुरू प्यारो !, अन्य में लघु सातवां ॥

## शार्दूल विक्रीड़ित ॥

वारह और सात इस प्रकार १९ अक्षर इस छन्द के एक चरण में होते हैं। और यह भी स्मरण रहे कि प्रथम भगण रखकर फिर क्रमशः सगण, जगण तथा फिर भी सगण और चरणान्त में दो वेर तगण रखना चाहिये। हिन्दी कविता के पुराने ग्रन्थों में इस छन्द का साटक नाम है †।

---

*आदि मध्यावशेषे च, गोलो भेद वर्जितम्।
वर्णाष्टं पाद पादेषु, छन्दोऽनुष्टुप् सर्जितम् ॥

†कर्मे द्वादश अंक आद सँगया, मात्रा सिवो सागरे।
दुज्जीवी करिके कलाष्ट दसवीं, अर्को विरामाधिकं।
अंते गुर्व निहार धार सब के, औरों कछू भेद ना।
तीसों मत्त उनीस अंक चरने, सेसो भणै साटिकं।

उदाहरण:—

( अजमेर नगर के सुप्रसिद्ध औषधालय के विषय में )

आयुर्वैदिक औषधालय तथा, नीको चिकित्सालय,
स्वामी रामदयालुजी बुधमणी, जाके गुणी हैं वड़े।
संवत् वेद४ रु शास्त्र६ नंद९ रवि१ की, चैत्रादि एकादशी,
माँगीलाल निवास नीमच सदा, तापै लिखी सम्मति ॥

## मात्रासमक ॥

इस छन्द के प्रत्येक चरण में १६ मात्रा होती हैं और नवीं लघु मात्रा होती है तथा अन्त का अक्षर दीर्घ होता है।

उदाहरण—

आर्यसमाज परम नीका है, वेदरीति अति शुभ फैलावे।
पर उपकारी सब हितकारी, शिक्षा करता प्यारी प्यारी ॥

## शिखरिणी ॥

इस छन्द में प्रत्येक चरण के अन्दर १७ अक्षर इस प्रकार हों, पहिला अक्षर लघु, फिर पांच अक्षर दीर्घ, फिर इसके आगे पांच ही अक्षर लघु, फिर दो दीर्घ, फिर तीन लघु और फिर अन्त में एक गुरु। प्रसंग चलने पर मैंने अपने एक मित्र को "शिखरिणी" के विषय में एक शिखरिणी लिखी थी। वह यहां भी आलेख कीजाती है कि पाठकों को कुछ लाभदायिनी हो।

गुणी मानी ज्ञानी ! श्रवण प्रिय नीकी शिखरिणी ।
लखी छन्दों माँहीं "य, म, न, स, भ, ला, गा, शिखरिणी ॥
लसत्पादे पादे वरण दश सप्त मृदुमयं ।
कविर्वर्णी हर्णी मनगति शिखर्णी मधुरयम् * ॥

## चंचरी ॥

इस छन्द का " विबुधप्रिय " नाम भी है । रगण, सगण, जगण, फिर भी जगण, भगण और रगण इस भांति १८ अक्षर का यह छन्द है । तथा इसमें ८ वें और प्रत्येक पद के अन्तिम अक्षर पर विश्राम है ।

मित्र चित्त विचार के भल छन्द आप पठाइयो ।
चंचरी सम छन्द जान सुमान मित्रन गाइयो ॥
पाद पाद प्रमाण द्वादश षष्ठ वर्ण सनातना ।
छन्द नूतन रीति का नवनीत सुन्दर सा बना ॥

## संयुता ॥

एक सगण और दो जगण तथा एक गुरु का संयुता छन्द होता है । उदाहरण:–

---

* घनासा चोमासा घनघन घटा सावन छुटी ।
हरासा ये घासा वन विच भरासा गुथ रहा ॥
जवासा का रासा जलकर जगासा रहगया ।
तमासा है खासा त्रिभुवन पिपासा मिटगई ॥

( "रामचन्द्रिका" से )

परशुराम:—यह कौन को दल देखिये ।
वामदेव:—यह राम को प्रभु लेखिये ॥
परशुराम:—कहि कौन राम न जानियो ।
वामदेव:—शर ताड़िका जिन मारियो ॥

## हरिणी ॥

इस छन्द में प्रथम के पांच अक्षर लघु तथा ११ वां, १३ वां, १४ वां और १६ वां अक्षर भी लघु होता है। और छठे दशवें तथा १७ वें अक्षरों पर विश्राम होता है। उदाहरण:—

अनुपम धरा, धार दया, मय सब जगह ।
सब जग प्रभू, अन्तर्यामी, अनन्त पवित्र है ।
मरण-जरता, भय-काया, बिन श्रुति कहत ।
"किंकर" भजिये, महादेव समाज सिखात है ॥

## नगस्वरूपिणी ॥

इस छन्द में एक लघु एक गुरु, एक लघु एक गुरु, इसी प्रकार सम्पूर्ण छन्द की व्यवस्था है। उदाहरण:—

सँसार का भला करो, समाज है इसीलिये ।
भला कहो भला सुनो, अनार्य्यता तजो तजो ॥

## तोटक ॥

इस छन्द के प्रत्येक चरण में १२ वर्ण होते हैं तथा यह भी स्मरण रहे कि इसमें आदि से अन्त पर्य्यन्त एक सगन ही रहता है अर्थात् दो लघु एक गुरु, दो लघु एक गुरु। इसी प्रकार सम्पूर्ण छन्द बनता है। उदाहरण:—

**अजमेर सुमेर समान रहे, रज के बिन नीक बयार बहे।**
**भल औसर पै बदरा बरसे, बिनती यह ही जगदीश्वर से॥**

## भुजङ्गप्रयात ॥

"भुजङ्गप्रयात" के एक २ चरण में चार २ यगण होते हैं, अर्थात् एक लघु दो गुरु, एक लघु दो गुरु। इसी प्रकार सर्व छन्द का स्वरूप बनता है। उदाहरण:—

महावीर श्रीराम जों ही चढ़े हैं।
कपी सेन के ठट्ठ आगे बढ़े हैं।
भिरे खग्ग से खग्ग कीन्हें अतंका।
बड़ी ही सवारी लई जीति लंका॥

## कुसुमविचित्रा ॥

इस छन्द के प्रत्येक चरण में एक नगण, एक यगण, फिर भी एक नगण, एक यगण अर्थात् छन्द भर में चार

लघु दो गुरु, चार लघु दो गुरु इसी प्रकार अक्षरों का नियम है। उदाहरण:—

अज अविनाशी, घट घट वासी।
अलख अदेही, परम सनेही।
अगम सुसंगी, निगम प्रकाशी।
अगणित नामी, शुभगुण धामी॥

## विद्युन्माला॥

इस छन्द में सब अक्षर दीर्घ होते हैं और चार २ अक्षर पर विश्राम होता है। उदाहरण:—

सारे प्राणी जानो भाई, स्वामीजी की आज्ञा मानो।
आर्यों को संदेशा मेरा, ये मुक्ती की पंथा प्यारो॥

## मालिनी॥

इस छन्द के प्रत्येक चरण में निम्नोक्त भांति १५ वर्ण होते हैं—२ नगण, १ मगण और २ यगण तथा आठवें और फिर सातवें अक्षर पर विश्राम होता है। उदाहरण:—

( मदिरा के दोष )

अवगुण जननी है, बुद्धि की नाशिनी है।
सकल शुभ गुणों का, मूल भी मारिणी है।
कपट छल भरी है, मूढ़ता धारिणी है।
विकट विषमयी है, नागिनी वारुणी है॥

( आश्विन के मेघ का वर्णन )

सघन जलद छाये, आज देखो पियारे।
मगन मन हुआ है, मोर माते फिरे हैं॥

सकल जलद नीके, बूंद-वाले हुए हैं।
तरुण वय गई है, वृद्धता छा गई है* ॥

## शालिनी ॥

इस छन्द के प्रत्येक चरण में निम्नोक्त प्रकार ११ वर्ण हैं—१ मगण, २ तगण और अन्त में दो गुरु तथा चौथे और ७ वें पर यति होता है। उदाहरण:—

प्रातर्वेला–कीजिये ईश पूजा,
सायङ्काले–कीजिये ईश पूजा।
प्यारो प्यारो ! त्यागि के और धन्धा,
कीजे कीजे, प्रेम से ध्यान सन्ध्या ॥

## वंशस्थ ॥

इस छन्द के सभी चरणों में १२ अक्षर होते हैं, याने एक जगण, एक तगण, एक जगण और एक रगण। और पादान्त में यति होता है। उदाहरण:—

( स्त्रियों को शिक्षा )

सुनो सुनो वेदमताभिमानिनी !,
बनो सदा ही जगदीशपूजिनी।
भजो जरा ना वट-भूत-भूतिनी,
कुरूपधारी जड़देव-डाकिनी ॥

---

* अधिक उदाहरण हमारे बनाये श्रीकृष्णचरित में देखिये ॥

## वसन्ततिलका ॥

इस छन्द के प्रत्येक चरण में १४ अक्षर अर्थात् पहिले एक तगण, फिर एक भगण, पश्चात् दो जगण और अन्त में दो गुरु का नियम है। उदाहरण:—

हे मित्र मित्र ! करुणा इन बालकों पे,
कीजे, यही निगम का पथ जान लीजे।
माता पिता स्वकुल से बिछुड़े हुए ये,
स्थानादि अन्न बल से दुबले हुए ये॥

## इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा ॥

इन दोनों ही छन्दों में ग्यारह २ अक्षर होते हैं। इन्द्रवज्रा में दो तगण, एक जगण और दो गुरु तथा उपेन्द्रवज्रा में एक जगण, एक तगण, एक जगण और दो गुरु। हमको किसी कवि का बनाया हुआ एक ऐसा छन्द याद है कि जिसका पहिला और तीसरा चरण इन्द्रवज्रा के नियमानुसार है और दूसरा तथा चौथा उपेन्द्रवज्रा के नियमानुकूल है। पाठकों के ज्ञातार्थ वह प्रकाशित किया जाता है:—

( बुद्धवचन )

संसार सारा सुख शान्ति भोगे *, ( १ )
शरीर मेरा इसके लिये है। ( २ )

चाहे मुझे कष्ट अनेक होवें, ( ३ )
मुझे न पर्वा इसकी जरा भी ॥ ( ४ )

## लावनी रंगत वशीकरण ॥

इसके प्रत्येक चरण में २२ मात्रा होती हैं। उदाहरणः—

आरज-समाज आनन्द-वारि बरसावे।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥
जगदीश प्रेम की वेल सींचनेहारा।
सुन्दर-विधि वेदों का है यह रखवारा ॥
यति दयानन्द का प्यारा परमदुलारा।
है चिन्तामणि सम, अचल विचार हमारा ॥
गो आदि पशू की रक्षा भल सिखलावे।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ १ ॥
जन कहें कनागत समाज रोकनहारा।
बस दान पुण्य की प्रथा विमोचनहारा ॥
तीरथ प्रतिमाको भी समाज नहिं माने।
परदेश-गमन में दोष नहीं हा ! जाने ॥

---

* वाला अनाथा मृतमातृ ताता,
गायन्ति गाथां नितरां क्षुधार्त्ताः।
रक्षन्तु दीनान् निजशक्तिहीनान्,
क्षुद्राक्षसी कम्पितकोमलाङ्गान्। ( इ० व० )

तज लोकलाज विधवा को भी परणावे ।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ २ ॥
पर विचार कीजे—जो जन आयू सारी ।
की पापकर्म में नष्ट—दुष्ट था भारी ॥
जिन करी जन्म भर—हिंसा, चोरी, जारी ।
मरने पर मोच्छा किया पुत्र ने भारी ॥
उस लीला से क्या बने ? किया फल पावे ।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ ३ ॥
गंगाजल आदि पवित्र विमल सुखदाई ।
पर मुक्ति-पंथ तो ज्ञान सिवा नहिं भाई ॥
"यदि गंग विनाशे पाप" सोचिये प्यारे ।
तब दुख में क्यों फँसि रहे सुबन्धु हमारे ॥
कारण दुख का है "पाप" निगम यह गावे ।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ ४ ॥
यदि कहो "दुःख नहिं मिटै, गंग न्हाने से ।
बस पाप मूल ही छूटे, गंग न्हाने से ॥"
"पर गंगासेवी कई बनारस वाले ।
सौ सौ वर न्हा के रहे चित्त के काले ॥"
क्योंकर ? बन्धन बिन मन धोये कटजावे ।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ ५ ॥
"माया की पूजा ईश मान के करना ।"
है अन्धकार का कारण श्रुति ने बरना ॥
जो पुष्प गन्ध से भी सूक्तम जगराई ।
उसकी प्रतिमा बनि सके न कोटि उपाई ॥
नानक, कबीर, हरिदास यही समझावे ।

यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ ६ ॥
निज देश और परदेश भूमि सब हर की ।
सब ठौर किये शुभ काम प्रशंसा नर की ॥
नर कहीं सिधारे दुष्ट चलन पर त्यागे ।
मद, मांस, झूंठ, कुलटा, कुरीति से भागे ॥
केवल विदेश से धर्म नहीं मिट जावे ।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ ७ ॥
बालम बूढ़े चमकें सब तनु की नारी ।
पक गये केश पुनि कमर गई है मारी ॥
तनु सारे सलवट पड़ी मौत की त्यारी ।
सर मौढ़ बांध हा ! परणें कई कुमारी ॥
वे रांड बनें क्या तुम्हें तरस नहिं आवे ।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ ८ ॥
जो ब्रह्म-वेद ने कहा वही बस गाया ।
ऋषि दयानन्द ने अपना कहां मिलाया ? ॥
कर विद्या धर्मप्रचार सकल मन भाया ।
पुनि यज्ञ धूम से यह थल स्वर्ग बनाया ॥
जन–अनाथरक्षा का उपदेश सुनावे ।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ ९ ॥
मत और देश का भेद पड़ा था भारी ।
धनि भेद मिटा उन प्रीति रीति विस्तारी ॥
सब जीवों का है एक पिता जगराई ।
ऋषि कहा जगत् के जीवमात्र हैं भाई ॥
धनि धनि "किंकर" यह सभा प्रणव पद गावे ।
यह मेघ-माल लख मनमयूर हरसावे ॥ १० ॥
॥ इत्योम् ॥

# विज्ञापन ॥

| | | |
|---|---|---|
| ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका | मूल्य | १।) |
| सत्यार्थप्रकाश | ,, | १) |
| संस्कारविधि | ,, | ॥) |
| हवनमन्त्र | ,, | )। |
| आर्य्योद्देश्यरत्नमाला | ,, | -)। |
| नित्यकर्म्मविधि | ,, | )। |
| ऋषिचरित्र | ,, | -)॥ |
| भजनवागीचा | ,, | ।-) |
| आर्यसमाज क्या मानता है और क्या नहीं मानता ? | ,, | -) |
| आ० स० के दश नियमों पर व्याख्यान | | -) |
| गुरुमंत्र व्याख्या | मूल्य | )। |
| मोहनीमन्त्र | ,, | -) |
| प्रार्थना | ,, | )। |
| संगीतनगरकीर्त्तन | ,, | )। |

पुस्तक मिलने के पते:—

श्रीमांगीलाल गुप्त 'कविकिङ्कर,

केसरगंज, अजमेर. या--छावनी नीमच.

# प्रेममाधुरी ॥

अर्थात्।

## शृंगार रस के कवित्तों का संग्रह

जिसे कविकुल शिरोमणि श्रीमद् भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी ने रसिक जनों के चित्तविनोदार्थ विरचित किया और जिसे काशी निवासी बाबू रामकृष्ण बर्म्मा ने सर्व्व सधारण के हितार्थ प्रकाशित किया।

---

यह पुस्तक बाबू रामकृष्ण बर्म्मा मैनेजर भारतजीवन बनारस के पास मिलेगी।

---


## काशी।

भारतजीवन प्रेस में मुद्रित हुई।

सन् १८८६ ई०

तीसरी बार १००० ] [ मूल्य ♂)

दोहा।

बार बार पिय आरसी मत देखहु चित लाय।
सुन्दर कोमल रूप पैं दीठ न कहुं लगि जाय।
देखन देहुं न आरसी सुन्दर नन्द कुमार
कहुं मोहित ह्वै रूप निज मति मोहिं देहु बिसार

सवैया।

राखत नैनन मैं हिय मैं भरि दूर भए छिन होत अचेत है। सौतिन की कहै कौन कथा तसवीर हू सों सतराति सहेत है। लाग भरी अनुराग भरी हरिचन्द सबै रस आपु ही लेत है। रूप सुधा इकली ही पियै पियहू कों न आरसी देखन देत है॥ १॥

कूकै लगीं कोइलैं कदम्बन पै बैठि फेरि धोए धोए पात हिलि २ सरसै लगे। बोलै लगी दादुर मयूर लगे नाचै फेरि देखि कै संजोगी जन हिय हरसै लगे। हरी भई भूमि सीरी पवन चलन लागी लखि हरिचन्द फेर प्रान तरसै लगे। फेरि झूमि झूमि बरषा की रितु आई फेरि बादर निगोरे झुकि २ बरसै लगे॥ २॥

पहिले ही जाय मिले गुन मैं श्रवन फेर रूप सुधा मधि कीनो नैनहू पयान है। हँसनि नटनि चितवनि मुसकानि सुघराई रसिकाई मिलि मति पय पान है। मोहि मोहि मोहन मई री मन मेरो भयो हरीचन्द भेद ना परत कछु जान है। कान्ह भए प्रानमय प्रान भये कान्हमय हिय मैं न जानी परै कान्ह है कि प्रान है॥ ३॥

करि कै अकेली मोहि जात प्राननाथ अबै कौन जानै आय कब फेर दुख हरिहौ। जीव को न काम कछू प्यारे घनश्याम बिना आप कैं न जीहैं हम जो पै इतै धरिहौ। हरीचन्द साथ नाथ लेन मैं न मानि कहा लाभ निज जीय मैं बताओ तो बिचरिहौ। देह सङ्ग जैते तौ टहलहू करत जातो एहो प्रान प्यारे प्रान लाइ कहा करिहौ॥ ४॥

गुरु जन बरजि रहे री सब भाँति मोहि सङ्ग तिनहू की छाँड़ि प्रेम रङ्ग राची मैं। त्यौं ही बदनामी लई कुलटा कहाई हौं कलङ्किनी ह्वै बनी ऐसी प्रेम लीक खांची मैं। कहै हरिचन्द अबै छूटी प्रान प्यारे काज याते जग झूठ्यो रह्यो एक भई सांची मैं। नेह के बजाय बाज छाँड़ि सब लाज आज घूँघट उघारि ब्रजराज हेत नाची मैं॥ ५॥

बाढ्यो करै दिन ही दिन ह्वै छिनकोटि उपाय करो न बुझाई। दाहत लाज समाज सखी गुरु को भय नींद सबै सङ्ग लाई। छीजत देह के साथ मैं प्रानहु हा हरिचन्द

करौं का उपाई। क्यों हूं बूझे नहिं यांहू के नीरन लालन कैसी टनारि लगाई ॥ ६ ॥

छाड़ि कै माहि गए मथुरा कूबरी नहँ जाय भई पटरानी। जो सुधि लोनी नो जोग सिखायो भये हरिचन्द अनूपम ज्ञानी। गोप भएँ जो पै भए रजपूत लड़ो किन जोह को आपुन जानी। भारत ही अबलागन को तुम याही में बीरता आय छुटानी ॥ ७ ॥

बाजी कर बंसी धुनि बाजि बाजि अननन जोराजोरी मुख छवि चितहि चुराए लेत। हँसनि हँसावति जगत सो निहारी भुरि सुरनि पियारो मन सब सों भुराए लेत। हरीचन्द बोलन चलनि बनरानि पीत पट फहरानि मिलि धीरज मिटाए लेत। जुलफैं तिहारी लाल कुलफ तोरैं प्रान प्यारे नैन सैन प्रान संग ही लगाए लेत ॥ ८ ॥

हौं तो तिहारे दिखाइबे के हित जागत ही रही नैन हजार सो। आए न राति पिया हरिचन्द लिए कर भोर लौं हौं रही भार सो। है यह हीरन सों जड़ो रत्न तापै करो कछु चित्र चितार सो। देखो जू लालन कैसो बनो है नई यह मुन्दर कञ्चन थारसो ॥ ९ ॥

सोई तिया अरसाय कै सेज पै सो छबि लाल बिचारत ही रहे। चौंकि उसासन सों श्रम सीकर भौरन को निरुवारत ही रहे। त्यौं छबि देखिबे को मुख तें पलकैं हरि-

चन्द जू टारत ही रहे । ह्वै कै घरी लौं जके से खरे बृखभानु कुमारि निहारत ही रहे ॥ १० ॥

बोल्यौ करै नूपुर स्रवन के निकट सदा पदतल लाल मन मेरे विहर्‌यौ करै । बाजी करै बंसी धुनि पूरि रोम रोम मुख मन मुसुकानि मन्द मनहि हर्‌यो करै । हरीचन्द चलनि मुरनि बतरानि चित छाई रहै छबि जुग दृगन भर्‌यौ करै । प्रान हूं ते प्यारो रहै प्यारो तू सदाई तेरो पीरो पट सदा जिय बीच फहर्‌यौ करै ॥ ११ ॥

ब्रजबासी बियोगिन के घर मैं जग छाड़ि कै क्यौं जनमाई हमैं । मिलिबो बड़ी दूर रह्यौ हरिचन्द दई इकनाम धराई हमैं । जग के सगरे सुख सों ठगि कै सहिबे को यही है जिवाई हमैं । केहि बैर सों हाय दई बिधिना दुख देखिबे हीं को बनाई हमैं ॥ १२ ॥

कहा कहौं प्यारे जू बियोग मैं तिहारे चित बिरह अनल लूक भरकि भरकि उठै । कैसे कै बिताऊं दिन जोबन के हाहा काम कर लै कमान मोपै तरकि तरकि उठै । भूलै नाहिं हमनि तिहारी हरिचन्द तैसी बांकी चितवनि हिय फरकि फरकि उठै । बेधि बेधि उठत बिसीखे नैन बान मेरे हिय मैं कटीली भौंह करकि करकि उठै ॥ १३ ॥

कुबजा जग के कहा बाहर है नन्दलाल ने जा उर हाथ धर्‌यौ । मथुरा कहा भूमि की भूमि नहीं जहं जाय

कै प्यारे निवास कर्यौ । हरिचन्द न काहू को दोष कछू मिलि हैं सोइ भाग में जो उतर्यौ । सब को जहां भाग मिल्यौ तहां हाय वियोग हमारे ही बांटे पर्यौ ॥ १४ ॥

रोकहिं जो तो अमङ्गल होय औ प्रेम नसै जो कहैं पिय जाइए । जो कहैं जाहु न तौ प्रभुता जो कछू न कहैं तो सनेह नसाइए । जो हरिचन्द कहैं तुमरे बिन जीहैं न तो यह क्यों पतिआइए । तासों पयान समै तुमरे हम का कहैं आपै हमैं समझाइए ॥ १५ ॥

आजु सिंगार कै नौलि के मन्दिर बैठी न साथ में कोउ सहेली । धाय कै चूमै कबौं प्रतिबिंब कबौं कहै अपुहि प्रेम पहेली । अंक में आपुने आपै लगे हरिचन्द जू सो करै आपु नवेली । प्रीतम के सुख में पियमैं भई आए तें लाल के जान्यौ अकेली ॥ १६ ॥

सोई बनी सब मंजुल कुंज अलीन की भीर जहां अति हेली । साज अनेक सजे सुख के हरिचन्द जू त्यौंही खरी हैं सहेली । सोई नई रतियां रति की पिय सोई कहै ढिग प्रेम पहेली । सोचत सो सुख सोई भई तिय आए तें लाल के जान्यौ अकेली ॥ १७ ॥

तब तो अखानी निज बीरता प्रमानी कै कै प्रेमके निबाह भारे गरब गरूरे हौ । जान सों पिया कै कह्यौ प्रथम पयान हरिचन्द अब बैठे कित दूरि दूरि दूरे हौ । हाय

प्राननाथ बिनु भोगत अनेक बिथा खोइ सुख आसा ला-
गि अजनौं मजूरे हौ। अजौं तन तजि कै न जाओ लजवा-
ओ मोहि हाहा मेरे प्रान निरलज्ज तुम पूरे हौ ॥ १८ ॥

जा दिन लाल बजावत बेनु अचानक आय कढ़े मम
द्वारे। हौं रही ठाढ़ी अटा अपने लखि के हँसे मोहन
नन्द दुलारे। लाजि कै भाजि गई हरिचंद हौं भौन के
भीतर भीति के मारे। ताही दिना तें चवाइनहूँ मिलि
हाय चवाय के चौचंद पारे ॥ १९ ॥

ब्रज में अब कौन कला बसिये नित बात हौ चौगुनो
चाव करैं। अपराध बिना हरिचन्द जू हाय चवाइनैं बात
कुदाव करैं। पौन मों गौन करैं हौं लरी परैं हाय बड़ाई
रिसाव करैं। जो सपनेहूँ मिलैं नन्दलाल तौ सौतुख में
ये चवाव करैं ॥ २० ॥

आजु कुंज मंदिर में छके रंग दोउ बैठे केलि करै लाज
छोड़ि रंग सों जहकि २। सखी जन कहत कहानी हरि-
चन्द तहाँ नेह भरी केकी कोकपिक सी चहकि चहकि।
एक टक बदन निहारि बलिहार लै लै गाढ़े भुज भरि लेत
नेह सों लहकि लहकि। उर लपटाय प्यारी बार बार चूमि
मुख प्रेम भरी बातैं करैं मद सों जहकि बहकि ॥ २१ ॥

आजु कुंज मंदिर अनन्द भरि बैठे श्याम श्यामा संग
रंगन उमंग अनुरागे हैं। घन घहरात बरसात बात जात

ज्यौं ज्यौं त्यौंही त्यौं अधिक दोऊ प्रेम पुंज पागे हैं। हरी चन्द अलकैं कपोल पैं सिमिटि रही बारि बुन्द चुअत अतिहि नीक लागे हैं। भींजि भींजि लपटि लपटि सतराइ दोऊ नील पीत मिलि भए ऐकै रंग पागे हैं ॥ २२ ॥

ब्रज के सब नाव धरैं मिलि ज्यौं ज्यौं बढ़ाइ के त्यौं दोउ चाव करैं। हरिचन्द हसैं जितनो सबही जितनो दृढ़ दोऊ निभाव करैं। धनि कै चहुंधा चरचा रिसि सौं परतच्छ ये प्रेम प्रभाव करैं। हम दोऊ निसंक मिलैं बिहरैं नत चौगुनो लोग चवाव करैं ॥ २३ ॥

मिलि गांव के नांव धरौ सबही चहुंधा लखि चौगुनो चाव करौ। सब भांति हमैं बदनाम करौ कढ़ि कोटिन कोटि कुदाव करौ। हरिचन्द जू जीवन को फल पाय चुकौं अब लाख उपाव करौ। हम सोवत हैं पिय अंक निसंक चवाइनै आओ चवाव करौ ॥ २४ ॥

व्याकुल ह्वौं तड़पै बिनु पीतम कोऊ तो नेकु दया उर लाओ। प्यासी तजौं तन रूप सुधा बिनु पानिप पी को पपीहै पिआओ। जीय मैं हौस कहूं रहि जाय न हा हरिचन्द कोऊ उठि धाओ। आवै न आवै पियारो अरे कोऊ हाल तौ जाइ कै मेरो सुनाओ ॥ २५ ॥

जानत हौं नहीं ऐसो सखी इन मोहन जैसी करी हम सों हहै। होत न आपुनें पीय पराए कबौं यह बोलनि

सांची परी भई। हाहा कहा हरिचन्द करौं बिपरीत सबै बिधि नै हम सो ठई। मोहन ह्वै निरमोही महा भए नेह बढ़ाय कै हाथ दगा दई॥ २६॥

लागि कै मोहन को निरमोहहि नाहक बैर बिसाहि धरैं परी। त्यौं हरिचन्द बिगारि कै लोक सौं वेद की लीक भलै निदरैं परी। आपुनी ही करनी को मिल्यौ फल तासों सबै सहते ही सरैं परी। यामैं न औरको दोष कछू सखि चूक हमारी हमारे गरैं परी॥ २७॥

नेह लगाय लुभाय लई पहिलै बृज की सब ही सुकुमारियां। बेनु बजाय बुलाय रमाय हंसाय खिलाय करीं मनुहारियां। सो हरिचन्द जुदा ह्वै बसे बधि के कुल सौं ब्रजबाल बिचारियां। वाह जू प्रेम निबाह्यो भलो बलिहारियां लालन वे बलिहारियां॥ २८॥

मेरी गलीन न आइए लालन यासों सबै तुमहीं लखि जाइ है। प्रेम तो सोई छिप्यौ जो रहै प्रगटैं रस ह्व सब भांति नसाइ है। आइ हौं छांड़ो उतै हरिचन्द मनोरथ आप को कुञ्ज पुराइ है। अंक न बाट मैं लाइए जू कोउ देखि जो लैहै कलंक लगाइ है॥ २९॥

मारग प्रेम को को समुझै हरिचन्द यथारथ होत यथा है। लाभ कछू न पुकारन मैं बदनाम हौं होन कौं सारी कथा है। जानत है जिय मेरो भली बिधि और उपाय सबै

बिरथा है। बावरे हैं ब्रज के सगरे मोंहि नाहक पूछत कौन त्रिथा है ॥ ३० ॥

उमडि उमड़ि दृग रोअत अधीर भए मुख दुति पीरी परी बिरह महा भरी। हरीचन्द प्रेम माती मनहुं गुलाबी छकी काम भर भांवरी सी दुति तनकी करी। प्रेम कारीगर के अनेक रंग देखौ यह जोगिआ सजाए बाल बिरिक तरे खरी। आंखिन मैं सांवरी हिए मैं बसे लाल वह बार बार रूखतें पुकारत हरी हरी ॥ ३१ ॥

जिय पैं जु होइ अधिकार तो बिचार कीजे लोकलाज भलो बुरो भलें निरधारिए। नैन श्रोन कर पग सबै परबस भए उतै चलि जात इन्हैं कैसे कै सम्हारिये। हरीचन्द भई सब भांति सो पराई हम इन्हैं ग्यान कहि कहो कैसे कै निवारिए। मन में रहै जो ताहि दीजिये बिसारि मन आपै बसे जामैं ताहि कैसे कै बिसारिए ॥ ३२ ॥

हीते न लाल कठोर इते जु पै होते कहूं तुमहूं बरसानियां। गोकुल गांव के लोग कठोर करें छत हीय में मारि निसानियां। यौं तरसावत हौ अबलागन कों मुख देखिबे कों दधिदानियां। दीनता कों हमरे तुमरे निरदेयन हू की चलेंगी कहानियां ॥ ३३ ॥

बेनी सो बखानें कवि व्याली काली लाली आली नित सबहू को प्रतिपाली अहो काली है। ताही सों उताल

नन्दलाल बाल कूदि जल नाच्यौं जाय तांति जाकि उ-पमा न पायो है। तहां हरिचन्द सबै गांव के तमासे लगी तिन के चकृत तूह कीनो सुख ख्याली है। ज्यौं ही ज्यौं नचत प्यारी राधे तेरे दृग दोय त्योंही त्यौं नचत फन पर बनमाली है ॥ ३४ ॥

नैन लाल कुसुम पलास से रहे हैं फूल माल गरे बन झालरि सी लाई है। भँवर गुञ्जार हरिनाम को उचार तिमि कोकिला सो कुहकि वियोग राग गाई है। हरीचन्द तजि पतझार घर बार सबै बौरी बनि दौरी चारु पौन ऐसी धाई है। तेरे बिछुरे ते प्रान कंत के हिमंत अंत तेरी प्रेम जोगिनी बसन्त बनि आई है ॥ ३५ ॥

पीरो तन पर्यो फूली सरसों सरस सोई मन मुरझानो पतझार मनो लाई है। सौरी स्वास त्रिविध समीर सी बहति सदा अंखियां बरसि मधु झरिसी लगाई है। हरीचन्द फूले मन मैन के मसूसन सों ताही सों रसाल बाल बढ़ि कै बौराई है। तेरे बिछुरे तें प्रान कंत के हिमंत अंत तेरी प्रेम जोगिनी बसन्त बनि आई है ॥ ३६ ॥

एरी प्रानप्यारी बिन देखे मुख तेरो मेरे जिय में बि-रह घटा घहरि घहरि उठै। त्योंही हरिचन्द सुधि भूलत न क्यों हूं तेरो नांवो केस रैन दिन छहरि छहरि उठै। गड़ि गड़ि उठत कटीले कुच कोर तेरी सारी सो लहरदार

लहरि २ उठै । सालि सालि जात आधे आधे नैन बान तेरे घूंघट की फहरानि फहरि फहरि उठै ॥ ३७ ॥

बैठे सबै गुरु लोग जहां तहां आई बधू लखि सास भई खरी । देन उराहनो लागी तबै निमि को मति भोरी न जानत रीत री । डीठ निहारो बड़ो हरिचन्द न देखत मेरी सु ऐसी दसा करी । आंचर दीनी सखी मुख मैं कहि सारी फटो तो बनाइ हैं दूसरी ॥ ३८ ॥

प्रान पियारे तिहारे लिये सखि बैठे हैं देर सों माल-ती के तर । तू रही बात बनाय बनाय मिलै न वृथा गहि कै कर सों कर । तोहि घरी छिन बीतत है हरिचन्द उतै जुग सो पलहू भर । तेरी तो हांसी उतै नहिं धीरज नौ घरी भद्रा घरी मैं जरै घर ॥ ३९ ॥

दीनदयाल कहाइ कै धाइ के दीनन सों क्यों सनेह बढ़ायो । त्यौं हरिचन्द जू बेदन मैं करुनानिधि नाम कहो क्यौं गवायो । एती रुखाई न चाहिये तापै कृपा करि कै जेहि को अपनायो । ऐसोही जो पै सुभाव रह्यौ तो गरीब नेवाज क्यौं नाम धरायो ॥ ४० ॥

जिय सूधी चितौन की साध रही सदा बातन मैं अन-खाय रहे । हंसि कै हरिचन्द न बोले कबौं मन दूर ही सौं ललचाय रहे । नहिं नेक दया उर आवत क्यौं करि कै कहा ऐसे सुभाय रहे । सुख कौन सो प्यारे दियो पहिले जेहि के बदले यौं सताय रहे ॥ ४१ ॥

जानत कौन है प्रेम बिथा केहि सों चरचा या बियोग की कीजिये । को कही मानै कहा समझै कोऊ क्यों बिन बात की रारहिं लीजिये । क्रूर चवाइन मे पड़ि कै हरिचन्द जू क्यों इन बातन छीजिये । पूछत मौन क्यों बैठि रही सब प्यारे कहा इन्हें उत्तर दीजिये ॥ ४२ ॥

क्यों इन कोमल गोल कपोलन देखि गुलाब को फूल लजायो । त्यों हरिचन्द जू पङ्कज के दल सो सुकुमार सबै अंग भायो । अमृत से जुग ओठ लसै नव पल्लव सो कर क्यों है सुहायो । पाहन सो मन हो तो सबै अंग कोमल क्यों करतार बनायो ॥ ४३ ॥

तुमरे तुमरे सब कोऊ कहै तुम्हें सो कहा प्यारे सुनात नहीं । बिरदावलि आपनी राखो मिलो मोहि सोचिबे की कछू बात नहीं । हरिचन्द जू होनी हुती सो भई इन बातन सों कछु हात नहीं । अपनावते सोच बिचारि तबै जलपान कै पूछनी जात नहीं ॥ ४४ ॥

पिय प्यारे बिना यह माधुरी मूरति औरन की अब पेखिये का । सुख छाड़ि कै संगम को तुमरे इन तुच्छन को अब लेखिये का । हरिचन्द जू हीरन को बेवहार कै कांचन कों लै परेखिए का । जिन आंखिन सों तुव रूप लख्यो उन आंखिन सों अब देखिये का ॥ ४५ ॥

आओ सबै जुरि कै इस गांव के देखने को जे रहे ब

कुलात हैं। चार चवाइवे को दुरजीनन धायो न पाज समाये लजात हैं। सास जेठानी सखी संग को हरिचन्द करौ मिलि भेद की बात हैं । घूंघट टारि निवारि भयें पिय कों हम आजु निशाऱन जात हैं ॥ ४६ ॥

एक ही गांव में बास सदा घर पास इहौ नहिं जानती हैं। पुनि पांचएं सातएं आवत जात की आस न चित्त में आनती हैं । हम कौन उपाय करैं इन को हरिचन्द महा हठ ठानती हैं । पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अंखियां दुखियां नहिं मानती हैं ॥ ४७ ॥

यह संग में लागिये डोलैं सदा बिन देखे न धीरज आनती हैं। छिन हूं जो वियोग परै हरिचन्द तौ चाल प्रलै की सु ठांनती हैं। बरुनी में थिरैं न झपैं उझपैं पल में न समाइबो जानती हैं । पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अंखियां दुखियां नहीं मानती हैं ॥ ४८ ॥

व्यापक ब्रह्म सबै थल पूरन हैं हम हू पहिचानती हैं॥ पै बिना नन्दलाल बिहाल सदा हरिचन्द न ज्ञानहि ठानती हैं। तुम ऊधो यहै कहियो उन सों हम और कछू नहिं जानती हैं। पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अंखियां दुखियां नहीं मानती हैं॥ ४९ ॥

जिन को लरकाई सों संग कियो अब सोऊ न साथहि साजती हैं। हरिचन्द जू जानि हमै बदनाम चवाव घने

उपराजती है। हम हाय कलङ्किनी ऐसी भईं सखियां लखि कै मोहि भाजती हैं। निसि वासर संग में जे रहती सुख सोजिवे सों अब लाजती हैं ॥ ५० ॥

पहिले बहु भांति भरोसो दियो अब ही हम लाइ मिलावती हैं। हरिचन्द भरोसे रही इन के सखियां जे हमारी कहावती हैं। अब वेई जुदा ह्वै रहीं हम सों उलटो मिलि कै समुझावती हैं। पहिले तो लगाइ कै आग अरी जल कों अब आपुहि धावती हैं ॥ ५१ ॥

सब आस तो छूटी पिया मिलवे की न जानें मनोरथ कौन सजैं। हरिचन्द जू दुःख अनेक सहें पै अड़े हैं टरें न कहू कों भजैं। अब सों निरसंक ह्वै बैठि रहैं सो निरादर हू कछू न लजैं। नहिं जानी परै कछू या तन को केहि मोह तें पापी न प्रान तजैं ॥ ५२ ॥

मोहन सों जबै नैन लगे तब तो मिलि कै समुझावन धाईं। प्रीति की रीति औ नीति कही मिलिवे की अनेकन बात सुनाईं। वेऊ दगा दै जुदा ह्वै गईं हरिचन्द जू एक हू काम न आईं। हाय मैं कौन उपाय करौं सखियां अपुनी ह्वै गईं जु पराईं ॥ ५३ ॥

जिन कों दुरिगो वह प्यार सबै क्यों रुखाईं नई यह साजत हौ। हरिचन्द भए हौ कहा के कहा अनबोलिवे तें नहिं लाजत हौ। नित को मिलनो तो किनारे रह्यो मुख

देखत ही दुरि भाजत हौ । पहिले अपनाय बढ़ाय कै नेह न रूसिबे में अब लाजत हौ ॥ ५४ ॥

पहिले मुसकाइ लजाइ कछू क्यों चितै मुरि मोतन छाम कियो । पुनि नैन लगाइ बढ़ाइ कै प्रीति निबाहन को क्यों कलाम कियो । हरिचन्द कहा के कहा हूँ गए छपटीन सों क्यों यह काम कियो । मन मांहि जो तोड़न ही की हती अपनाइ कै क्यों बदनाम कियो ॥ ५५ ॥

हाय दसा यह कासो कहों कोउ नाहिं सुनै जो करै हूं निहोरन । कोउ बचावनहारो नहीं हरिचन्द जू यों तो हितू हैं करोरन । सो बधि कै गिरधारन को अब धाइ कै दूर करो इन चोरन । प्यारे तिहारे निवास की ठौर को चोरन हैं अखयों बरजोरन ॥ ५६ ॥

हित की हम सों सब बात कहौ सुख सून सबै बत-रावती हौ । पै पिया हरिचन्द सों नेन लगे ओहि हेत ये बातें बनावती हौ । यहां कौन जो मानै तिहारो कह्यौ हमैं बातन क्यों बहरावती हौ । सजनी मन पास नहीं हमरे तुम कौन को का समुझावती हौ ॥ ५७ ॥

जब सो हम नेह कियो उन सों तब सों तुम बातें सु-नावती हौ । हम औरन के बस में हैं परे हरिचन्द कहा समुझावती हौ । कोउ आपु न भूलि है बूझहु तो तुम क्यों

हमको बतरावती हौ । इन नैनन को सखी दोष सबै हमैं झूठहि दोष लगावती हौ ॥ ५८ ॥

जिन के हित त्यागि कै लोक की लाज को संगही संग मैं फेरो किये । हरिचन्द जू त्यौं मग आवत जात मैं साथ घरी घरी घेरो कियो । जिन के हित मैं बदनाम भई तिन नेकु कह्यौ नहिं मेरो कियो । हमैं व्याकुल छोड़ि कै हाय सखी कोऊ और के जाइ बसेरो कियो ॥ ५९ ॥

पिय रूसबे लायक होय जो रूसनो वाही सों चाहिए मान किये । हरिचन्द तो दास सदा बिन मोल को बोले सदा रुख तेरो लिये । रहै तेरे सखी सो सखी नितही मुख तेरो ही प्यारी बिलोकि जिये । इतने हूं पै जाने न क्यौं तू रहै सदा पीय सों भौंह तनेनी किये ॥ ६० ॥

धाइ कै आगे मिलीं पहिले तुम कौन सों पूछि कै सो मोहिं भाखो । त्यौं तुम ने सब लाज तजी केहि के कहे एतो कियो अभिलाखो । काज बिगारि सबै अपनो हरिचन्द जू धीरज क्यौं नहिं राखो । क्यौं अब रोइ कै प्रान तजौ अपुने किये को फल क्यौं नहिं चाखो ॥ ६१ ॥

पहिले बिन जाने पिछाने बिना मिलीं धाइ कै आगे बिचारे बिना । अपुने सों जुदा ह्वै गईं तुरतै निज लाभ औ हानि सम्हारे बिना । हरिचन्द जू दोष सबै इन को जो कियो सब पूछे हमारे बिना । बरियाई लखो इन की उलटी अब रोवहिं आपु निहारे बिना । ६२ ।

गुरुजन बरज रहे री बहु बार मोहिं संक तिनहुं की छोड़ि प्रेम रंग राची मैं। त्यौंही बदनामी लई कुलटा कहाइ कै कलङ्किन कहाई ऐसी प्रीति लीक खांची मैं। कहि हरचिन्द सब छोड्यो प्रान प्यारे काज याते जग झूठो भयो रही एक सांची मैं। नेह के बजाय बाज छोड़ि सब लाज भाज घूंघट उघारि ब्रजराज हेत नाची मैं ॥६३

इन दुखियान कों न चैन सपनेहुं मिल्यौं तासों सदा व्याकुल विकल अकुलायेंगी। प्यारे हरिचन्द जू की बीती जानि औध प्रान चाहत चले पै ये तो संग ना समायंगी। देख्यो एक बारहू न नैन भरि तोहि यातें जौन जौन लोक जैहैं तहां पछतायंगी। बिना प्रान प्यारे भये दरस तुम्हारे हाय मरेहू पै आखें ये खुलीही रहि जायंगी ॥ ६४ ॥

मैं वृषभानु पुरा की निवासिनी मेरी रहै ब्रज बीथिन भावरी। एक संदेसो कहौं तुम सों पै सुनो जो करो कछु ताको उपाव री। जो हरिचन्द जू कुंजन में मिलो आहिं करौ लखि कै तुम बावरी। बूझी है वाने दया करिकै कहिये परसों कब होयगी रावरी ॥ ६५ ॥

केहि पाप सों पापी न प्रान चलें अटके कित कौन विचार लयो। नहिं जानि परै हरिचन्द कछू विधि ने हम सों हठ कौन ठयो। निसि आजहू की गई हाय बिहाय

बिना पिय कैसे न जीव गयो। हत भागिनी आखिन को नित के दुख देखिवे कों फिर भोर भयो॥ ६६॥

हम तो सब भांति तिहारी भई तुम्हें छाड़ि न और सों नेह करौं। हरिचन्द जू छाड़ो सबै कछू एक तिहारोई ध्यान सदा ही धरौं। अपने को परायो बनाइ कै लाजहू छाड़ि खरी बिरहागि जरौं। सब ही सहौं नाहिं कहौं कछू पै तुव नेह नहीं या परेखे मरौं॥ ६७॥

आजु लौं जो न मिले तो कहा हम तो तुमरे सब भांति कहावैं। मेरो उराहनो है कछु नाहिं सबै फल आपुने भाग को पावैं। जो हरिचन्द भई सो भई अब प्रान चले चहैं तासों सुनावैं। प्यारे जू है जग की यह रीति बिदा की समै सब कण्ठ लगावैं॥ ६८॥

जान देरी जान दे बिचार कुलकान हू को गावन दे मेरे कुलटापन के गाथ को। मैं तो रही भूलि बिन बात को बिचारे जोन प्रेम को बिगारे छाड़ ऐसे सब साथ को। देखो हरिचन्द कौन लाभ पायो यासों पछितात रहि गई धन पाय खोयो हाथ को। जरौ ऐसो लाज भावे कौन काज जाने आज लखन न दीनो भरि नैन प्रान नाथ को॥ ६९॥

सदा व्याकुल ही रहैं आपु बिना इन्कों हू कछू कहि जाइये तो। इक बारहूं तोहिं न देख्यौ कभू तिनको सुख

चन्द दिखाइये तो। हरिचन्द जू ये अखियां नित की है बियोगी इन्हें समुझाइये तो। दुखियान को मीमत प्यारे कबौं अङ्कराइ कै धोर धराइये तो ॥ ७० ॥

रोवै सदा नित की दुखियां अलि य अंखिया जिहि धोस सों लागीं। रूप दिखाओ इन्हें कबहू हरिचन्द जू जानि महा अनुरागी। मानि हैं ओरन मों नहिं ये तुव रंग रंगी कुल लाजहि त्यागी। आंसुन को अपने अंचरान सों लालन पोंछि करो बड़ भागी ॥ ७१ ॥

घर बाहर के न को काम कछू नहिं को यह रार निवारि सकै। हरिचन्द जू जो बिगरौं अलि कै तिन्हें कोन है जौन संवारि सकै। समुझाइ प्रबोधि कै नीति कथा इन्हें धीरज कोऊ न धारि सकै। तुम्हरे बिनु लालन कौन है जो यह प्रेम के आंसू निवारि सकै ॥ ७२ ॥

संग मैं जे निस वासर हौं जिन ते कछु बातें न मैंने छिपाई। जे हितकारिनी मेरी हुती हरिचन्द जू होय गईं सो पराई। सो सब नेह गयो छिन को मिलिबे को न एकहू बात बताई। और बचाव करें उलटो हरि हाय ये एकहू काम न आई ॥ ७३ ॥

हौं कुलटा हौं कलङ्किनी हौं हम ने सब छाड़ि दयो कहा खोजो। आछो रहो अपने घर में तुम क्यों यहां छार करेजहि छोजो। लागि न जाय कलङ्क तुम्हें कहूं दूर

रही संग लागी न डोलौ। बावरी ह्वौ जो भई अजनी तो हटो हम सों मति आइ कै बोलौ ॥ ७४ ॥

आयो सखी सावन बिदेस मन भावन जू कैसे करि मोरो चित हाय धीर धारि है। ऐहैं कौन झूलन हिंडोरो बैठि संग मेरे कौन मनुहारि करि भुजा कण्ठ धारि है। हरिचन्द भौंजत बचैहै कौन भीजि आप कौन उर लाइ काम ताप निरवारि है। मान समै पग परि कौन समुझै है हाय कौन मेरी प्रान प्यारी कहि कै पुकारि है ॥७५॥

हौं तो तिहारे सखी सों सखी सुख सों जहां चाहिये रैन बिताइये। पै बिनती इतनी हरिचन्द न रूठि गरीब पै भौंह चढ़ाइये। एक मतो क्यों कियो तुम सों तिन सोच न आवै न आप जो आइये। रूसिबे सों पियप्यारे तिहारे दिवाकर रूसत है क्यों बताइये ॥ ७६ ॥

जे मन फेरिबो जानो नहीं बसि नेह निबाह कियो नहिं भावत। हेरि कै फेरि मुखै हरिचन्द जू देखन हूं को हमैं तरसावत। प्रीत पपोहन कों घन सांवरे पानिप रूप कबौं न पिआवत। जानो न नेक बिथा पर की बलिहारी तऊ पै सुजान कहावत ॥ ७७ ॥

आई गुरु लोग संग न्योते ब्रज गांव नई दुलही सुहाई शोभा अंगन सनी रही। पूछै मनमोहन बतायो सखियन

वह सोई राधा प्यारी वृषभानु की जनी रही। हरीचन्द पास जाय प्यारो बतरायो दोठ लाज की घनी सो मनो चीर की घनी रही। देखो अनदेखो देख्यो आधो मुख पाय तऊ आधो मुख देखबे की हौस ही बनी रही ॥७८॥

भूली सी भ्रमी सी चौंकी जकी सी थकी सी गोपी दुखी सी रहत कछू नाहीं सुधि देह की। मोही सी लुभाई कछु मोदक सो खाए सदा बिसरी सी रहै नेक खबर न गेह की। रिस भरी रहै कबौं फूली न समाति अंग हँसि २ कहै बात अधिक उमेह की। पूछे ते खिसानी होय उत्तर न आवै ताहि जानी हम जानी है निसानी या सनेह की ॥ ७९ ॥

आई प्रात सोवत जगाई मैं सखीन साथ ननद बिलोकिबे को करै अभिलाख है। हरीचन्द हँसि २ पोंछे मुख अंचल सों आरसी लै दूजी ठाढ़ी करै कछू भाख है। एक मोती बीनै एक गूथै बेनी एक हंसे सांवत हमारो एक करै मिस लाख है। बसन के दागी धोवै नख छत एक टोवै चूर लै चुरी को खेलै एक जूस ताख है ॥ ८० ॥

आइ कै जगत बीच काहू सों न करै बैर कोऊ कछू काम करे इच्छा जो न जोई की। ब्राह्मण की छत्रिन की वैसनि की सूद्रन की अन्त्यज मलेछ की न ग्वाल की न भोई की। भले की बुरे की हरिचन्द से पतित हू की थोरे

की बहुत को न एक को न दोऊ को। चाहे जो चुनिन्दा भयो जग बीच मेरे मन तौ न तू कबहूं कहूं निन्दा करु कोऊ की ॥ ८१ ॥

आई आज कित अकुलाई घबराई प्रात रीसें मति पूंछे बात रङ्ग कित ढरिगो। सोने से या गात छ्वै के मानो भयो आय के या आतप प्रभात को प्रगट पसरिगो। हरी-चन्द सौतिन की मुख दुति छीनी कै या अपनी बरन कहूं पाय धाय ररिगो। नीलपट तेरो आज और रंग भयो काहे मेरे जान बिछुरि पिया ते पीरो परिगो ॥ ८२ ॥

कैसे सखी बसिए ससुरारि में लाज को जेइबो क्यों सहि जावे। ऐसी सहेलिनि अधमी हैं नख दन्त के दाग ले कोऊ गनावे। त्यौं हरिचन्द खरी ढिग सास के ढीठ जिठानी पिया को हंसावे। आदि कै चादर रात के सेज की सामने ही ननदी चली आवे ॥ ८३ ॥

हम तो तिहारे सब भांति सों कहावें सदा हम सों दुराव कौन मोहै सो सनाइ दे। द्वार पै खड़े हैं बड़ी देर सों पहे हैं यह आसा है हमारी ताहि नेक सो पुराइ दे। हरीचन्द जोरि कर बिनती बखाने यही देखि मेरो ओर नेक मन्द मुसकाइ दे। एरी प्रान प्यारी बार २ बलिहारी नेक घूंघट उघारि मोहि बदन दिखाइ दे ॥ ८४ ॥

सास जेठानिन सों दबती रहै लीने रहै रुख त्यौं ननदी को। दासिन सों सतरात नहीं हरिचन्द करै सनमान सखी को। पीय को दच्छिन जानि न दूसत चौगुनो चाव बढ़ै या लली को। सौतिन हूं को असीसै सुहाग भरे कर आपने सेंदुर टीको ॥ ८५ ॥

कहो कौन मिलाप की बातैं कहै कहौ औरन को तो कछू न पतीजिए। चित चाहै जहां बसिए मिलिए न कभू जिय भावै सुई २ कीजिए। अब प्रान चलै चहैं तासों कहैं हरिचन्द की सो बिनती सुन लीजिए। भरि नैन हमैं इक बेर हू तो अपुनो मुख मोहन जोहन दीजिए ॥ ८६ ॥

आई केलि मन्दिर तमासा को बताइ छल बाला ससि सूर के कला पै किये दावा सी। धाइ ताहि गहन चहत हरिचन्द जू के चूमि रही धर मैं चहूंघा करि कावा सी। धोखा दे कै अंकम भरत अकुलानी अति चञ्चल चखन सों लखानी मृग छावा सी। आह्हि करि सिसकि सकोरि तन मोरि पिय कर तें छुटकि छूटी छलकि छलावा सी ॥ ८७ ॥

तूं रंगी रङ्ग पिया के सखी कछू बात न तेरी लखाइ परी है। जद्यपि हौं नित पास रहौं तऊ मेरी यहै मति सोच भरी है। जान अहो हरिचन्द भवे यह भीत मतीत

तिहारो खरी है । स्याम बसे उर में नित ताहि सों पीत हू कंचुकी चोल हरी है । ८८ ।

जाकु जू जाकु जू दूर हटो सो बकै जिन बातहीं को पचै यासों । वा छलियाने बधान के खासो पठायो है याहि न जाने कहा सों । काहि करै उपदेस खरो हरिचंद कहै किन जाइ के तासों । सो बनि पण्डित ज्ञान सिखावत कूबरी हू नहिं ऊबरी जासों ॥ ८९ ॥

सिसुताई अजौं न गई तन ते तऊ जोबन जोति बटोरै लगी । सुनि कै चरचा हरिचंद की कान कछूक दै भौंह मरोरै लगी । बचि सासु जेठानिन सों पिय तें दुरि घूंघट में दृग जोरै लगी । दुलही उलही सब अंगन तें दिन द्वै तें पियूष निचोरै लगी ॥ ९० ॥

कहा भयो जो पै काव्य भेद भाव छन्द बिना हरि जस जामें सोई कथनि सुहाई है । सन्त जन गावें सुनें कहें जपैं ताहि कोरी कविता बनाई देखि गिरा पछिताई है । राम रस बिना जैसे फिको लगे स्वाद तिमि राम रस बिना स्वाद गन्ध हू न पाई है । सन्त मन भाई सुखदाई है सुहाई जा मैं कृष्ण केलि गाई सोई सांची कविताई है ॥ ९१ ॥

पण्डित होइ कै कीनो कहा जुपै कृष्ण कथा सों न नेह ललाम है कर्म्मन मैं पचि भूलयो वृथा स्रम ही फल पायो

लह्यो न बिराम है। मान गरूर है धूर सबै हिय मैं जुपै नाहिं रम्यो घनश्याम है। है धनधाम मराम हराम सो राम बिना सब काम निकाम है॥ ९२॥

इत उत जग में दिवानी सी फिरत रही कौन बदनामी जौन सिर पै लई नहीं। त्रास गुरु लोगन की श्रास के अनेक सही कब बहु भांतिन के ताप सों तई नहीं। हरिचन्द गिरी बन कु ञ्जहां जहां सुन्यो तहां तहां कब उठि धाइ कै गई नहीं। होनी अनहोनी कीनी सब ही तिहारे हेतु तऊ प्रानप्यारे भेंट तुम सों भई नहीं॥ ९३॥

एक बेर नैन भरि देखैं जाहि मोहै तौन माचयौ ब्रज गांव ठांव ठांव में कहर है। सङ्ग लगी डोलैं कोऊ घरही कराहैं परी छूट्यो खान पान रैन चैन बन घर है। हरीचन्द जहां सुनौं तहां चरचा है यही एक प्रेम डोर नाध्यो सगरो सहर है। यामैं ना संदेह कछू दैया हौं पुकारे कहौं भैया की सौं मैया री कन्हैया जादूगर है॥९४॥

जौन गली कढ़ै तहां मोहै नर नारी सब औरन के मारे बन्द होइ जात राह है। छकी सी थकी सी सबै इत उत ठाढ़ी रहैं बायल सी घूमैं केती किए जिय चाह है। हरीचन्द जासौं जोई कहै तौन सोई करै सरबस तजे सब पतिब्रत राह है। यामैं न संदेह कछू सहजहि मोहै मन सांवरो सलोना जानै टोना खामखाह है॥ ९५॥

सुखद समीर रूखी ह्वै चलन लागी घटि चली रैन कछु सिसिर हिमन्त की। फूलै लागे फूल फेरि बौरे बन आम लागे कोकिलै कुहूकौ लागीं माती मदमन्त की। हरीचन्द काम की दुहाई सी फिरन लागी आवै लागी छन छन सुधि प्यारे कन्त की। लागी परै आयु बिरहीन की सिरानी अब आयो घहैं रातैं फेर दुखद बसन्त की ॥९६॥

बन बन आगि सी लगाइ कै पलास फूले सरसों गुलाब गुललाला कचनारो हाय। आइ गयो सिर पै चढाये मैन बान निज बिरहिन दौरि दौरि प्रानन सम्हारो हाय। हरिचन्द कोइलैं कुहूकी फेर बन बन बाजै लाग्यो जग फेरि काम को नगारो हाय। दूर प्रान प्यारो काको कीजिये सहारो अब आयो फेरि सिर पैं बसन्त बज मारो हाय ॥ ९७ ॥

सवैया—रूप दिखाइ कै मोल लियो मन बाल गुड़ी बहु रङ्गन जोरी। चाहत मांझो दियो हरिचन्द जू लै अपुनै गुन की रस डोरी। फेरि कै नैन परेतन पै बदनामी की तापै लगाइ पुंछोरी। प्रीत की चङ्ग उमङ्ग चढ़ाय कै सो हरि हाथ बढ़ाय के तोरी ॥ ९८ ॥

जानतहीं नहीं हौँ जग मैं किहि को सबरे मिलि भाखत है सुख। चौंकत चैन को नाम सुने सपनेहु न जानत भोगन को रुख। ऐसन सों हरिचन्द जू दूरही बैठनो का

लखनो न भलो मुख। मो दुखिया के न पास रहो उठि कै न लगे तुमहूं को कहूं दुख ॥ ९९ ॥

गरजै घन दौरि रहैं लपटाइ भुजा भरि कै सुख पागी रहैं। हरिचन्द जू भीजि रहैं हिय मैं मिलि पौन चलै मद जागी रहैं। नभ दामिनि के दमके सतराइ छिपी पिय अङ्ग सुहागी रहैं। बड़ भागिनी वेई भहैं बरसात मैं जे पिय कण्ठ सों लागी रहैं ॥ १०० ॥

ऊधो जू सूधो गहो वह मारग ज्ञान की तेरे जहां गुदरी है। कोऊ नहीं सिख मानिहै ह्यां इक श्याम की प्रीत प्रतीत खरी है। ये ब्रजबाल सबै इक सी हरिचन्द जू मण्डली ही बिगरी है। एक जौ होय तो ज्ञान सिखाइए कूपही में यहां भांग परी है ॥ १०१ ॥

कौन कहै इत आइए लालन पावस में तो दया कर लीजिए। को हम हैं कहा जोर हमारो है क्यौं हरिचन्द वृथा हठ कीजिए। जो जिय मैं रुचै भेटिए ताहि दया करि कै तेहि कौं सुख दीजिए। कोरीही कोरी भली हम हैं पिय भींजिए जू उनके रस भींजिए ॥ १०२ ॥

सखि आयो बसंत रितून को कंत चहूं दिसि फूलि रही सरसों। वर सीतल मन्द सुगन्ध समीर सतावन हार भयो गर सों। अब सुंदर सांवरो नन्द किसोर कहै हरिचन्द

गयो घरसों । परसों को बिताय दियो बरसों तरसों कब पांय पिया परसों ॥ १०३ ॥ पांय = पैर

आजु केलि मन्दिर सों निकसि नवेली ठाढ़ी भौंर घारो घोर रहे गन्ध लोभि बार के । नैन अलसाने घूमैं पटह परे हैं भूम उर मैं प्रगट चिन्ह पिय कण्ठहार के । हरि-चन्द सखिन सों केलि की कहानी कहै रस मैं मसूसी रही आनस निवार के । सांचे मैं ढरी सी परी सोभी उ-तरी सी खरी बाजूबंद बांधे बाजू पकरि किवार के ॥१०४॥

साज्यौ साज गांव मिलि तीज के हिंडोरना को तानि के बितान खासा फरस बिछायो री । आवैं मिलि गोपी तापैं भीजि झुण्ड झुण्ड काम छाप सी लगावैं गावैं गीत मन भायोरी । साहि जानि पाछे परी देरो पै दया को हरिचन्द अंक लैके लाल छिपि पहुंचायो री । जानि गई ताहू पैचवाइनें गजब देखे पांय बिनु पंक के कलंक मोहि लायो री ॥ १०५ ॥

खोरि सांकरी में आजु छिपि कै बिहारी लाल तरु पें बिराजि छल जिय अति कीनो है । ग्वाल बाल साथ केहू इत उत घाटिन में छिपे हरिचन्द दान हेतु चित दीनो है । ताही समे गोपिन बिलोकि कूदि धाए सब ऊधम मचायो दूध दधि लूट लीनो है । दही जो गिरायो सो तो फेरहू कमाय लैहैं मन कहां पैहैं दान मिस जौन लीनो है ॥१०६

लाज समाज निवारी सबै प्रन प्रेम को प्यारे पसारन दीजिए। गारन दीजिए लोगन कों कुलटा कहि मोंहि पुकारन दीजिए। त्यौं हरिचन्द सबै भय टारि कै लाजन घूंघट टारन दीजिये। छाड़ि सकोचन चन्द मुखै भरि लोचन आजु निहारन दीजिए॥ १०७॥

धारन दीजिए धीर हिए कुल कानि कों आजु बिगारन दीजिए। मारन दीजिए लाज सबै हरिचन्द कलंक पसारन दीजिए। चार चवाइन कों चहुं ओर सों सोर मचाइ पुकारन दीजिए। छाँड़ि सकोचन चन्द मुखै भरि लोचन आजु निहारन दीजिये॥ १०८॥

पूरन पियूष प्रेम आसव छकी हौं रोम २ रस भीन्यौ सुधि भूली गेह गात की। लोक परलोक छोड़ि, लाज सों बदन मोड़ि उघरि नची हौं तजि संक तात मात की। हरीचन्द एतेहु पै दरस दिखावैं क्यौ न तरसत रैन दिना प्यासे प्रान पातकी। एरे ब्रजचन्द तेरे मुख की चकोरी हूं मैं एरे घनश्याम तेरे रूप की हौं चातकी॥ १०९॥

छाड़ि कुल बेद तेरी चेरी भई चाह भरी गुरुजन परिजन लोक लाज नासी हौं। चातकी तृषित तुव रूप सुधा हेत नित पल पल दुसह बियोग दुख गासीहौं। हरीचन्द एक ब्रत नेम प्रेमही को लीनो रूप की तिहारे ब्रज-

भूप हौं उपासी हौ । ज्याय लै रे प्रानन बचाय लै लगाय कण्ठ एरे नन्दलाल तेरी मोल लई दासी हौं ॥ २ ॥

तरसत श्रौन बिना सुने मीठे बैन तेरे क्यौंन तिन मांहिं सुधा बचन सुनाइ जाय । तेरे बिन मिले भई झांझरी सी देह प्रान राखि लेरे मेरा धाइ कंठ लपटाइ जाय । हरीचन्द बहुत भई न सहि जाइ अब हाहा निरमोही मेरे प्रानन बचाइ जाय । प्रीति निरवाहि दया जिय मैं बसाय आय एरे निरदई नेकु दरस दिखाय जाय ॥ १११ ॥

दौरि उठि प्यारी गर लावे गिरधारी किन ऐसे पियहू सों किन बोलै मान वादिनी । देखु हरिचन्द ठीक दुपहर तेरे हेतु आयो चलि दूर सों पियारो री प्रमादिनी ॥ तेरे गृह चलत न दुख सुख जान गिन्यो सीतल बनाउ ताहि सरत सवादिनी । मखमल भूमल भो लूह भई सीरी पास दूरी भई तेरे वह धूप भई चांदनी ॥ ११२ ॥

हे हरि जू बिछुरे तुम्हरे जहिं धारि सकी सो कौन बिधि धीरहिं । आखिर प्रान तजे दुख सों न सम्हारि सकी वा वियोग की पीरहिं ॥ पै हरिचन्द कहा कलकानि कहानी सुनाऊं कहा बलबीरहिं । जानि मंहा गुन रूप की रासि न प्रान तज्यो चहैं वाके सरीरहिं ॥ ११३ ॥

साजि सेज रङ्ग के महल में उमङ्ग भरी पिय गर लागि काम कसक मिटाएं लेत । ठानि बिपरीत पूरी मैन के

मसूसन सों सुरत समर जयपत्रहिं लिखाए लेत ॥ हरी-चन्द उझकि उझकि रति गाढ़ी करि लोंम भरी पियहि झकोरन हराए लेत । याद करि पीकी सब निर्दय घातै आजु प्रथम समागम को बदलो चुकाए लेत ॥ ११४ ॥

कबहु क बारिन में कुंजन निवारिन में इत उत बेलिन कों चौंकि चितवत है । कासन कपामन पै फिरत उदास कबों पल्लवन बैठि बैरि दिन रितवत है । हरीचन्द बागन कछारन पहारन में जित तित परयो गुनि नेह हितवत है । सूखे २ फूलन पे तरुगन सूलन पै मालती विरह भौंरि दिन बितवत है ॥ ११५ ॥

काले परे कोस चलि चलि थक गये पाय सुख के कसाले परे ताले परे नस के । रोय २ नैनन में हाले परे जाले परे मदन के पाले परे प्रान पर बस के । हरिचन्द अंग हू हवाले परे रोगन के सोगन के भाले परे तन बल खुखके । पगन में छाले परे नांविबे को नाले परे तऊ लाल लाले परे रावरे दरस के ॥ ११६ ॥

थाकी गति अंगन कीं मति पर गई मंद सूख झाझरी सी ह्वै के देह लागी पियरान । बावरी सी बुद्धि भई हँसी काहू छीन लई सुख के समाज जित तित लागे दूर जान । हरीचन्द रावरे विरह जग दुखमयो भयो कछू

पौर बांसहार लागे दिग्गगाम । नैन कुम्भिलान लागे मै-
नहु मधाम लागे पापी पानमाय पत्र माथ लागे सुर-
झान ॥ ११७ ॥

# घनाक्षरीनियमरत्नाकर ।

( अर्थात् )

घनाक्षरी छन्द की रचना के विषय में अ-
त्यन्त उपयोगी नियमों का ग्रन्थ ।

श्री १०८ गोस्वामि बालकृष्णलालजी
महाराज काँकरौलीपुराधिपतिसं-
स्थापित काशी कविसमाज के
सभ्यों तथा सर्वसाधारण

के हितार्थ

श्रीयुत बाबू जगन्नाथदास (रत्नाकर)
बी० ए० द्वारा लिखित ।

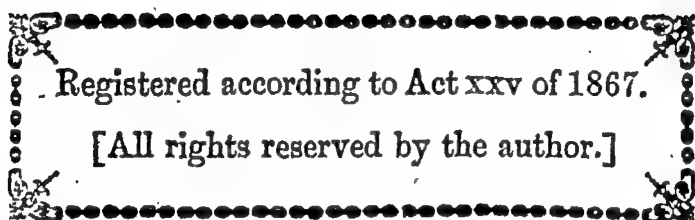
जिसे

उक्त महाराज की आज्ञानुसार बाबू राम-
कृष्ण वर्म्मा ने मुद्रित किया ।

RENARES.

BHARAT-JIWAN PRESS.

सन् १८९७ ई० ।



## भूमिका ।

जब मुझको प्रथम कबित्त बनाने का उत्साह हुआ तो मैंने उस छन्द का यथार्थ लक्षण ग्रन्थों में ढूंढ़ना आरम्भ किया और जहाँतक प्राप्त हो सके इकट्ठे किये परन्तु जब उन लक्षणों को सुकवियों के कबित्तों से मिला कर जाँचा तो उनको सर्वथा अपूर्ण पाया बरण कहीं कहीं उन लक्षणों में मेरी बुद्धि के अनुसार अयुक्तता भी प्रतीत हुई। जैसे इस लक्षण में—

दोहा।

"आठ आठ पैं तीन जति बहुरि सात पैं एक।
अन्त माहिँ नियमित गुरू कहि घनाक्षरी टेक"॥

अब इस लक्षण से यदि इन कबित्तों
को मिलाइये:—

"बिनसैं बिघनबृन्द द्वन्द पद बन्दतहीं मानि अरबिन्द जे मलिन्द परसत हैं। ध्यावत जोगिन्द

गुन गावत कविन्द जासु पावत पराग अनुराग सरसत हैं॥ भागैं दुरभाग अङ्गराग देखि दीन-दयाल पूरन प्रताप पापपुञ्ज भरसत हैं। ज्यों हीं ज्यों पिनाकीतनैबक्रतुण्ड झांकी परै त्यों त्यों कविता की झुण्ड वाँकी दरसत हैं॥"

"सूनो कै परमपद ऊनो कै बिरञ्चिमद न्यूनो कै नदीसनद इन्दिरा झुरै परी। मह्मिा मुनीसन की सम्पति दिगीसन की ईसन की सिद्धि ब्रजबीथि विथुरै परी॥ भादों की अँधेरी अधिराति मथुरा के पथ पाइ मनोरथ देव देवकी दुरै परी। पारावारपूरन अपार पारब्रह्म रासि जसुदा की कोर एक बारहिँ कुरै परी॥"

"छत्रिन के छत्र छत्रधारिन के छत्रपति छाजत छटान छितिछेस के छवैया हौ। कहै पदमाकर प्रभाव के प्रभाकर दया के दरियाव हिन्दूहद्द के रखैया हौ॥ जागते जगतसिंह साहेब सवाई श्री प्रतापनन्दपनन्दकुलचन्द रघुरैया हौ। आछे

रहौ राजराजराजन के महाराज कच्छ-कुलकलस हमारे तो कन्हैया हौ॥"

तो बिदित होता है कि पहिले कबित्त के पहिले तथा तीसरे चरण की तीसरी जतियां चौबीस पर नहीं पड़तीं, और दूसरे कबित्त के तीसरे तथा चौथे चरणों की पहिली जतियां आठ पर नहीं समाप्त होतीं। इसी प्रकार तीसरे कबित्त के दूसरे तथा तीसरे चरणों की दूसरी जतियां सोलह पर, और चौथे चरण की तीसरी जति चौबीस पर नहीं आतीं॥ इससे आठ आठ पर जति होने के नियम की अव्याप्ति स्पष्टही सिद्ध होती है। और यदि यह कहा जाय कि ये कबित्त ही अशुद्ध हैं, तो यह कहना सर्वथा असमंजस है क्योंकि प्रथम तो बहुधा उत्तमोत्तम कवियों के कबित्त ऐसेही प्राप्त होते हैं और दूसरे सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि इस नियम के भङ्ग होने से योग्य लोगों के कानों में भी, जो कि छन्दों के निमित्त श्रेष्टतम तुला माने जाते हैं,

कोई खटक नहीं होती इसके अतिरिक्त यह भी बात देखी गई कि उन नियमोंके अनुसार होने पर भी कवित्त अशुद्ध रह सकते हैं॥ *

जब कोई भी लक्षण ऐसा प्राप्त न हुआ कि जिसके अनुसार कवित्त बना देने पर यह साहसपूर्वक कहा जासके कि अब इसमें छन्द की अशुद्धि नहीं है तब मैंने निराश होकर यह निर्धार किया कि इन लक्षणों से केवल अक्षरों की गणना मात्र का नियम जाना जा सकता है; छन्द की गति के ठीक रखने में ये कुछ भी उपयोगी नहीं हैं; छन्द की गति का ठीक होना न होना केवल कवि के अनुभव पर निर्भर है। यह विचार कर मैंने फिर उस ओर कुछ ध्यान न दिया और अपने अनुभव के अनुसार कवित्त

* जैसे यह तुक "चलत वीर तिहारो उपाय नेकहूं नाहि विरहानल की ज्वाला कैसहूं नाहिं बुझै॥" इसमें आठ आठ पर जतियां भी हैं और अन्त में गुरु भी है पर तो भी इसको श्रवणतुला घनाक्षरी नहीं बतलाती।

जोड़ता जाड़ता रहा। पर जब गोस्वामि श्री १०८ बालकृष्णलाल जी महाराज की कृपा से काशी-कबिसमाज दृढ़ रूप से स्थापित हुआ और उसके सभासद लोग प्रति अधिवेशन में समस्यापूर्ति भेजने लगे तो बहुधा पूर्तियां ऐसी पाई जाने लगीं जो कि अक्षरों की गणना ठीक होने पर भी छन्दोभङ्गदूषण की उदाहरण हो सकती हैं। जब उन पर बिचार हुआ और मैंने उनको दूषित बतलाया तो मुझसे कहा गया कि अक्षर की गिनती तो इनमें ठीक है, अब इसपर भी यदि ये आप के लेखे दूषित हैं तो यह बतलाइये कि किस नियम के विरुद्ध होने के कारण यह दूषित हुई, और अब किस प्रकार ये सुधर सकती हैं। यह सुनकर जब मैंने बिचार किया तो स्थूल दृष्टि में ज्ञात हुआ कि अमुक स्थान पर अमुक गण पड़ने के कारण यह छन्द बिगड़ा, और मैंने बताना चाहा कि इस स्थान पर यह गण न आना चाहिये पर जब

फिर सूक्ष्म दृष्टि से देखा तो यह निश्चय हुआ कि उसी स्थान पर वही गण और और उत्तमोत्तम कवित्तों में पाये जाते हैं जो कदापि छन्दोभङ्ग नहीं कहे जा सकते; पर इसमें भी सन्देह नहीं कि इस विशेष कवित्त में यह गण इस स्थान पर छन्दोभङ्ग का कारण है। अब यह बात तो स्थिर हो गई कि किसी विशेष स्थान पर कोई विशेष गण छन्दोभङ्ग का कारण नहीं हो सकता, पर यह बात स्पष्ट रूप से ध्यान में न आई कि उस विशेष कवित्त में वह गण क्यों छन्दोभङ्ग का कारण हुआ। अतः कोई नियम स्थिर करके मैं न कह सका; केवल इतनाही कह कर चुप हो रहा कि छन्द की गति बिगड़ती है और विशेष इस समय मैं कुछ नहीं कह सका*।

* ऊपर लिखी कठिनाई को स्पष्टरूप से झलकाने के निमित्त कवित्त का एक चरण सव्याख्या उदाहरण रूप से लिखा जाता है। 'आयो मास फाग को विराग तजि राग भजि फाग शिव कैलाश पर मचावतो है री।" इसके उत्त

पर यह बासना मेरे चित्त में उसी समय आप से आप कोलाहल करने लगी कि यदि विशेष श्रम किया जाय तो कोई न कोई बात ऐसी हाथ आ सकती है कि जिसके द्वारा कवित्त का लक्षण यथार्थ रीति से निर्धारित हो सकता है।

यह विचार कर मैंने यह दृढ़ कर लिया कि घनाक्षरी के निमित्त कुछ नियम अवश्यही स्थिर होने चाहियें और बहुधा इस बात पर विचार भी करने लगा। एक दिन ईश्वर की कृपा से एक

राई में यही ज्ञात होता है कि जो गण चार अक्षर के पश्चात् पड़े हैं उन्हीं से अर्थात् लघु गुरु के इस विशेष क्रम के कारण छन्दोभङ्ग होता है। पर यदि इस चरण को इससे मिलाइये:, "कैधौं रूपराशि में सिंगाररस अङ्कुरित सङ्कुरित कैधौं तम तड़िताजुन्हाई में।" तो जो गण उस तुक में हैं वही इसमें भी दिखाई देते हैं पर इसमें वे गण छन्दोभंग के कारण नहीं होते; अतः यह बात स्पष्ट सिद्ध होती है कि गण विशेष के स्थान विशेष पर आने से छन्द नहीं बिगड़ सकता। उदाहरण के चरण में छन्दोभंग का कारण कुछ औरही है जो कि प्रतीत नहीं होता।

बात ऐसी ध्यान में आई जिससे भली भाँति निश्चय हो गया कि यदि इस रीति पर चला जाय तो निस्सन्देह नियम स्थिर हो सकते हैं। फिर तो मैंने यथाशक्ति श्रम करना आरम्भ किया और सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की कृपा से कुछ नियम ऐसे स्थिर किये जिनसे सन्तोष प्राप्त हुआ॥

इस समय एक दिन फिर उक्त श्री १०८ गोस्वामी बालकृष्णलालजी महाराज के सामने इस विषय की चर्चा चली, और बाबू रामकृष्ण वर्म्मा एडीटरभारतजीवन ने जो काशी कविसमाज के मन्त्री हैं इन नियमों की बहुत प्रशंसा की। उस पर उक्त महानुभाव ने आज्ञा दी कि इन नियमों को छपवाकर हमारे कविसमाज के सभासदों को भी बाँट देना चाहिये, जिसमें वे लोग भी इनका लाभ उठा सकें।

यद्यपि मैंने कईएक कारणों से अपना नाम कविसमाज के सभासदों में से विलग कर लिया है तथापि उनकी आज्ञा का पालन करना उ-

चित समझ कर और यह विचार कर कि यदि वास्तव में ये नियम उपकारी हों तो सर्वसाधारण भी इस परिश्रम का लाभ उठावें, इनको इस पुस्तिकाकार में प्रकाशित करता हूँ॥

इन नियमों में अभी कुछ त्रुटियों के होने की सम्भावना हो सकती है, क्योंकि अभी ये पहिलेपहल सोचे गये हैं और इसके पूर्व नहीं प्राप्त हो सके थे; परन्तु आशा है कि यदि कवित्त के प्रेमी सज्जन लोग इनसें त्रुटियां निकालकर मुझे सूचित करेंगे तो इनका सुधार भलीभाँति हो जायगा।

शिवालयघाट, बनारस।
भाद्रपद, शुक्ल ऋषिपञ्चमी
सम्बत् १९५४।

जगन्नाथदास
(रत्नाकर)



॥ श्रीहरिः ॥

# घनाक्षरीनियमरत्नाकर ।

वास्तव में तो सभी छन्दों की कवित्त संज्ञा है परन्तु आजकल्ह लोकव्यवहार में यह शब्द एक विशेष छन्द का वाचक हो गया है जिस्का नाम ग्रन्थों में घनाक्षरी तथा दण्डक मिलता है। परन्तु २६ वर्णों से अधिकवर्णों के छन्दों को सामान्यतः भी दण्डक कहते हैं अतः घनाक्षरी और कवित्त ये दो संज्ञा इस ग्रन्थ में प्रयुक्त होंगी । देव कवि ने "काव्यरसायन" नामक ग्रन्थ में इसको 'अनियतदण्डक' और 'घनाक्षरी' के नाम से लिखा है ।

देव कवि ने अनियतदण्डक चार प्रकार के अर्थात् ३० अक्षर से लेकर ३३ अक्षर तक के माने हैं। उनके उदाहरण नीचे लिखे जाते हैं।

तीस अक्षर का अनियतदण्डक।

"जैजै ब्रजदूलह दुलारे जसुदा के सुत महाराज मोहन मदन मदहारी। आनँदअखण्डरासमण्डलबिलास भुवमण्डल के आखण्डल देव हितकारी॥ वंसीधर श्रीधर गुपाल बनमालधर राधावर गोपवर गिरवरधारी। वृन्दावनचन्द नन्दनन्दन गोविन्द स्यामसुन्दर कुँवर कुञ्जमन्दिरविहारी॥"

एकतीस अक्षर का अनियतदण्डक।

"प्रानद दिगीसनि के मानद मुनीसनि के ईसनि के आनँद महानद अनीध के। भुवन अनेक राजराजन के एक राज तारिवे के काज जे जहाज भौ-पयोध के॥ शूलउरअसुरनि फूल सुररूषनि के निरमल मूल जे निपुन पुन्य पौध के। देव मारतण्डकुलमण्डन अखण्ड महिमण्डल के मारतण्ड आखण्डल औध के॥"

बत्तीस अक्षर का अनियतदण्डक।

"ऋषिमखराखन अबै धनुष सायकनि घायक

असुर सुरनायक सुभं-करन। तारन अहिल्या उर सिल्या अरि सूरन के तोरनपिनाक भृगुपति निरहंकरन॥ बन्धनपयोधि दसकन्धरिपु दीन-बन्धु अधम-उधारन भयङ्करभयङ्करन। पावक के अङ्क सोधि सिय निकलङ्क आये लङ्क रन जीति रबिकुल के अलङ्करन॥"

तेंतीस अक्षर का अनियतदण्डक।

"इभ से भिरत चहुँघाई तें घिरत घन आवत झिरत झीनी झर सों झपकि झपकि। सोरन मचावैं नाचैं मोरन की पाँतें चहूँ ओरन तैं चौंधि जाति चपला लपकि लपकि॥ बिना प्रान प्यारे प्रान न्यारे होत देव कहै नैन अस आनि रहे अँसुवा टपकि टपकि। रतिया अँधेरी धीर न तिया धरति मुख बतिया कढ़त उठै छतिया तपकि तपकि॥"

और ग्रन्थों में केवल दो प्रकार के घनाक्षरी छन्द, अर्थात्, इकतीस और बत्तीस अक्षर के मि-

लते हैं और उन्हीं का प्रचार विशेष है। किसी किसी अपर कवि ने भी तेंतीस वर्णं के कवित्त बनाये हैं परन्तु बहुतही कम—

जसवन्तसिंह का बनाया हुआ तेंतीस अक्षर का कवित्त।

"झिल्ली झनकारैं पिक चातक पुकारैं बन मोरनि गुहारैं उठैं जुगुनू चमकि चमकि। घोर घनकारे भारे धुरवा धुरारे धाम धूमनि मचावैं नाचैं दामिनी दमकि दमकि॥ झूकनि बयार बहै लूकनि लगावै अंग हूकनि भभूकनि की उर मैं खमकि खमकि। कैसें करि राखों प्रान प्यारे जसवन्त बिना नान्ही नान्ही बूँद झरै मेघवा झमकि झमकि॥"

इकतीस अक्षरवाला कवित्त मनहरन और बत्तीस वाला रूप घनाक्षरी कहलाता है। घनाक्षरी छन्द में लघु गुरु का किसी विशेष क्रम से पड़ने का नियम नहीं है; इसी कारण से ये मुक्तक तथा अनियत कहे जाते हैं॥

इकतीस अक्षरवाले घनाक्षरी छन्द के अन्त में एक गुरु नियम से रक्खा जाता है—

उदाहरण।

"बैठी सीसमन्दिर मैं सुन्दरि सिँगारि तन मूँदि कै किवार देव छबि सों छकति है। पीतपट लकुट मुकुट बनमाल धरें बेष कै पिया को प्रतिबिम्ब मैं तकति है॥ होति है उसङ्ग हियें अङ्क भरि भेंटिबे कों भुजनि पसारति समेटति जकति है। चौंकति चकति उझकति झझकति झुकि झूमि लचकति मुख चूमि ना सकति है॥"

"सरदनिसा के निसनाथ की उँजेरी जोहि रह्यो झाकि सङ्ग मैं अनङ्गरस पैबे कों। थिरत न कहूँ कहूँ फिरत फिर्यो है फेर बन बन व्याकुल बिखाद बिसरैबे कों॥ गरब न कीजै एरे किंसुक प्रसून तोपैं बैठ्यो नाहिं भँवर सुगन्धरस लैबे कों। मालती के बिरह बिकल कलकान ह्वै कै आयो तोहिँ जानि कै दवागि जरि जैबे कों॥"

और बत्तीस अक्षरवाले के अन्त में लघु का नियम लोगों ने कहा है और बहुधा बत्तीस अक्षर के कवित्त इसी प्रकार के होते भी हैं:—

उदाहरण।

"बीतिहै न मास नैन आनति हौ कत आँस यों कहि सवास प्यारे पोंछ्यो मुख निज कर। आँगन लौं आओ नीके मङ्गल मनाओ कछू दुख जनि पाओ हम आइहैं जु हरबर॥ फरकौहैं अधर नचौहैं नाकमोती भये उतर न आयो भरि आयो गह्वर गर। एते पर आलिन रसाल के मँगाइ धरे सुललित मौरन के पल्लव कलस पर॥"

"कीजियत प्यारे आज तेरे पर तेरी सौंहँ तन मन धन दीजियत तोपैं वार वार। कहै पद्माकर कहत मृगनैनी के यों नैन भरि आये बिन गुन के निहार हार॥ आँखिन तें आँसू ढरि परे जे कपोलनि कपोलनि तें परे ते उरोजनि

पैं बारबार। बड़े बड़े मोती मीन देत रजनीसैं रजनीस मनो देत सम्भु-सीस पर ढार ढार॥"

परन्तु कितने बत्तीस वर्णात्मक कवित्त ऐसे भी होते हैं जिनके अन्त में गुरु होता है और वह कानों को अप्रिय भी नहीं ज्ञात होते, अतः मेरी समझ में रूप घनाक्षरी के अन्त में गुरु का नियम करदेना उचित नहीं है:—

उदाहरण।

"चालै क्यों न चन्दमुखी चित मैं सुचैन करि तित बन बागन घनेरे अलि घूमि रहे। कहै पद्माकर मयूर मञ्जु नाचत हैं चाय सों चकोरिनि चकोर चूमि चूमि रहे॥ कदम अनार आम अगर असोक थोक लतनि समेत लोने लोने लगि भूमि रहे। फूलि रहे फलि रहे फैलि रहे फबि रहे झपि रहे झालि रहे झुकि रहे झूमि रहे॥"

"बैठी बनि बानिक सों मानिकमहल मध्य

अङ्ग अलबेली के अचानक थरकि परे । कहै पद्माकर तहाँई तनतापन तें बारन तें मुकता हजारन दरकि परे ॥ बाल छतियाँ तें धकधक ना कढ़त मुख बकना कढ़त कर ककना सरकि परे। पाँसुरी पकरि रही साँसु री सँभारै कौन बाँसुरी बजत आँख आँसु री ढरकि परे॥ *

देव कवि ने जो तीस तथा तेंतीस अक्षर के दो छन्द घनाक्षरी भेद में लिखे हैं वह और कवियों के काव्य में विशेष देखने में नहीं आते और कानों में भी वह विशेष रोचक नहीं ज्ञात होते। उनके विषय में कुछ पृथक् कहने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। जो नियम कि इकतीस तथा बत्तीस वर्णों के छन्द के विषय में कहे जायँगे वही तीस और तेंतीस अक्षरों के कवित्त में भी काम देंगे। इतना यहाँ कह देना

* इस बात पर ध्यान रखना चाहिये कि यदि रूप घनाक्षरी के अन्त में गुरु हो तो उस गुरु के पहिले दो लघु कानों को सुखद होते हैं ॥

आवश्यक है कि इकतीस अक्षरवाले कवित्त में का एक अन्तिम अक्षर कम कर देने से तीस अक्षरवाला कवित्त बन सकता है; और बत्तीस अक्षरवाले कवित्त के अन्त में एक अक्षर बढ़ा देने से तेंतीस अक्षरवाला कवित्त बन जाता है। परन्तु तेंतीस अक्षरवाले कवित्त में अन्त के तीन वा अधिक अक्षरों का लघु होना आवश्यकजान पड़ता है और यदि तीन लघु के एक शब्द का दो बेर आना आवश्य माना जाय तो अति उत्तम है जैसे कि ऊपर के उदाहरणों में है॥

प्रत्येक ग्रन्थों में जति का सोलह पर होना नियत किया गया है,—इस क्रम से मनहरन घनाक्षरी के एक चरण में सोलह + पन्द्रह अक्षर और रूपघनाक्षरी के प्रत्येक चरण में सोलह + सोलह अक्षर होने चाहियें; इसी रीति पर तीस अक्षरवाले कवित्त में सोलह + चौदह और तेंतीस अक्षरवाले में सोलह + सत्रह अक्षर समझना चाहिये। किसी किसी कवि ने पहिली

तीन जतियाँ आठ आठ पर मानी हैं परन्तु इस नियम का असम्यक् होना हम भूमिका में दिखला चुके हैं॥ सोलह पर जति होने के नियम को भी बहुधा सुकवियों ने अपने कवित्तों में भङ्ग कर डाला है और उनका वह नियम तोड़ना छन्द के अपकारी होने के स्थान पर किसी किसी कवित्त में उसके विषयानुकूल होने के कारण उपकारी हो गया है:—

उदाहरण।

"सखिन-सकोच गुरु-सोच मृगलोचनि रिसानी पिय सों जो उन नेकु हँसि छियो गात। मृदु मुसिक्याइ वे सहजि उठि गये इन सिसकि सिसकि रात खोई पायो परभात॥ कौन जानै वीर विन विरही विरहविथा हाय हाय करै पछितातिन कछू सुहात। बड़ी बड़ी आँखिन तें आँसू ढरि ढरि देव गोरो गोरो भोरो मुख ओरे लों विलानो जात॥"

"बाजीखुरधारनि पहार करै छार गढ़ गरद्द मिलावै जोर जङ्गनि जकत है। ल्यावै आसमान तें पताल तें पकरि पारावार तें कढ़ावै थाह लेत ना थकत है॥ सङ्क न करत लङ्कपति सों जुरत जङ्ग जीहि कै जमात जम छोभनि छकत है। काल तें कराल या अलाउद्दीन पातसाह ताको चोर चारोंओर राखि को सकत है॥"

पहिले कवित्त के पहिले चरण के सोलह पर जति नहीं पड़ी है; और दूसरे कवित्त के दूसरे चरण में भी वही दशा है, परन्तु सुनने में कोई दोष नहीं जान पड़ता, बरन दूसरे कवित्त में पूर्वार्द्ध के दो अक्षरों के उत्तरार्द्ध में मिल जाने के कारण कुछ विशेष गौरव तथा वक्ता की उद्विग्नता प्रतीत होती है जो कि विषय की उपयोगी है। अब निर्धारित होता है कि सोलह पर भी जति का होना एक साधारण नियम है अत्यन्त आवश्यक नहीं॥

जो बातें ऊपर कही गई हैं उनसे घनाक्षरी के अक्षरों की संख्या मात्र ज्ञात होती है और एक बात यह विदित होती है कि मनहरण घनाक्षरी का अन्त वर्ण गुरु होना चाहिये।

दोहा।

इकतिस बत्तिस वर्ण को
 है घनाक्षरी छन्द।
प्रथम कहावत मनहरण
 द्वितिय रूप सुखकन्द॥
सोलह पैं जति कीजिये
 बहुधा करिकै प्रेम।
अन्त माहिं मनहरण के
 गुरु राखौ करि नेम॥

पर इस नियम से यह कुछ भी नहीं विदित होता कि वह इकतीस अथवा बत्तीस अक्षर किस प्रकार से गुरु लघु के क्रमानुसार रक्खे जाने चाहियें और इसका कोई नियम घनाक्षरी

में हो भी नहीं सकता। उपोद्घात में हम दिखला चुके हैं कि किसी विशेष गण के किसी विशेष स्थान पर पड़ने के कारण घनाक्षरी छन्द की सुढरता कुढरता नहीं होती वरन उसका दूसराही कारण है॥

घनाक्षरी छन्द की सुढरता कुढरता जिन शब्दों को जोड़कर वह छन्द बनता है उन शब्दों के वर्णों की परिगणना तथा उन शब्दों के वर्णों के लघु गुरु के क्रम पर निर्भर है जो कि बड़ी ही सूक्ष्म बात है। वही गण उसी स्थान पर एक प्रकार के शब्द रखने से छन्दोभङ्ग का कारण हो जाता है, और वही गण उसी स्थान पर दूसरे शब्द रख देने से सर्वथा उत्तम ज्ञात होता है। अब वह नियम लिखे जाते हैं जिनके अनुसार घनाक्षरी में शब्द बैठाने चाहियें॥

---

नियमों के लिखने के पहिले कुछ आवश्यक बातें लिख दी जाती हैं, जो कि नियमों के भली भाँति समझने के निमित्त आवश्यक हैं। पाठक लोग इन पर ध्यान रक्खें।

(१) कह्यो न कछु जेहि विषय में
तेहिँ अनियत जिय जानि।

अर्थ—जिस विषय में कुछ न कहा हो उस्को अनियत समझो। जैसे तीन वर्णों के पश्चात् यदि एक अक्षर का एक शब्द पड़े तो उसके विषय में कुछ नहीं कहा है तो उसमें यह समझना चाहिये कि लघु गुरु का कुछ नियम नहीं है चाहे वह शब्द लघुआत्मक हो, जैसे, न, और चाहे गुरु आत्मक, जैसे, है, को इत्यादि॥

(२) कही जु संख्या नियम में अक्षर संख्या मानि॥

अर्थ—नियमों में जो संख्याएँ कही हैं उनसे अक्षरों की संख्याएँ समझनी चाहियें—जैसे नियमों में जो चार, तीन पाँच इत्यादि संख्याएँ कही गई हैं उनसे चार, तीन, पाँच इत्यादि वर्ण समझने चाहियें॥

(३) काहू संख्या पैं कोऊ कह्यो नियम जो होइ।
ताके उत्तर पूरवहु चारि चारि तजि सोइ॥

अर्थ—जब किसी संख्या विशेष के विषय में कोई नियम कहा जाय तो उस संख्या के चार चार वर्ण पश्चात् जो संख्याएँ हों तथा चार चार वर्ण पहिले जो संख्याएँ हों उन के विषय में भी वही नियम समझना चाहिये। जैसे यदि

यह कहा हो कि नौ अक्षरों के पश्चात् अमुक प्रकार से शब्द आवें तो यह समझना चाहिये कि एक, पाँच, तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस तथा उन्तीस अक्षरों के पश्चात् भी उसी प्रकार से शब्द आने चाहियें॥

(४) गण त्रै-वर्णसमूह कों कहत सबै मतिमान।
आठ रूप प्रस्तार सों तिनके होत सुजान॥
मगण, यगण, औ रगण, पुनि
सगण, तगण, जिय जानि।
जगण, भगण, औ नगण, ये
क्रम सों नामहिं मानि॥

अर्थ—तीन वर्णों के समूह को गण कहते हैं। तीन वर्ण के प्रस्तार करने से आठ रूप होते हैं। ये आठों रूप आठ गण कहलाते हैं क्रम से उनके नाम दोहे में दिये गये हैं॥

| | | | |
|---|---|---|---|
| ऽऽऽ | मगण | ऽऽ। | तगण |
| ।ऽऽ | यगण | ।ऽ। | जगण |
| ऽ।ऽ | रगण | ऽ।। | भगण |
| ।।ऽ | सगण | ।।। | नगण |

# अथ नियम।

## प्रथम नियम।

चरण आदि औ चार पर
धरो शब्द सो नाहिं।
ज, त, जाके आरम्भ में,
म, य, हू मध्यम आहिं॥

अर्थ—कवित्त के चरण के आदि में और चार, आठ, वारह, सोलह, वीस, चौवीस तथा अट्ठाइस वर्णों के पश्चात् यदि कोई शब्द आरम्भ हो तो उस्के आदि में जगण (। ऽ ।) तथा तगण (ऽ ऽ ।) न पड़ने पावें। और ऐसे शब्द के आरम्भ में यगण (। ऽ ऽ) और मगण (ऽ ऽ ऽ) के आने से भी मध्यम श्रेणी की गति हो जाती है॥ *

* यह स्मरण रखना चाहिये कि तीन अक्षरों से न्यून के शब्द में यह नियम नहीं लग सकता क्योंकि उसमें मगणादि की सम्भावनाही नहीं है। सम्भावना का यथोचित विचार और नियमों में भी कर लेना चाहिये॥ यह भी ध्यान रखना चाहिये कि यह नियम उसी अवसर के निमित्त है जहां एकही शब्द में उक्त गण पड़ें। पर जहां शब्दों के तोड़ जोड़ में पड़ें वहां यह नियम नहीं है। यही बात यथा सम्भव और नियमों में भी है।

उदाहरण।

( आरम्भ में जगणादि शब्द दूषित )

निकुञ्ज विलोकि वर वृन्दावन कानन की
लाजै बन नन्दन यों सोभा सरसति है।

इसमें आरम्भ में 'निकुञ्ज' शब्द जगण ( । ऽ । ) का है जिससे गति बिगड़ जाती है॥

( चार अक्षरों के पश्चात् जगणादि शब्द दूषित )

दूरही सों कलिन्दसुता रञ्जन बीचिनि सों
भीनी स्याम रङ्ग में सुखद दरसति है॥

इसमें चार अक्षरों के पश्चात् 'कलिन्दसुता' शब्द के जगणादि ( । ऽ । ) होने के कारण गति बिगड़ती है॥

( आरम्भ में तगणादि शब्द दूषित )

आकाश में लसति सुहाई मनभाई घटा
छहरि छहरि बूँद झीनी बरसति है।

इसमें आरम्भ में 'आकाश' शब्द तगण ( ऽ ऽ । ) का है जिसके कारण गति बिगड़ती है॥

( चार अक्षरों के पश्चात् तगणादि शब्द दूषित )

ऐसे समै सारङ्गधर पैं क्यों न चलै बीर बैठी
कहा मन मैं मसूसि तरसति है॥

इसमें चार अक्षरों के पश्चात् 'सारङ्गधर' शब्द तगणादि (ऽऽ।) है अतः गति बिगड़ी है॥

( आरम्भ में मगणादि शब्द मध्यम )

आकांक्षी तिहारे दरसन को भयो हौं हौं तो
टारि पट घूँघट को दरस दिखाइ दै।

इसमें आरम्भ में 'आकांक्षी' शब्द मगण (ऽऽऽ) का पड़कर गति को मध्यम करता है॥

( चार वर्णों के पश्चात् मगणादि शब्द मध्यम )

केसन में तातारी मृगम्मद सुगन्ध लसै
लट छटकाइ नेकु सो अब सुँघाइ दै॥

इसमें चार अक्षर के पश्चात् 'तातारी' शब्द मगण (ऽऽऽ) का है अतः गति मध्यम हो गई है॥

( आरम्भ में यगणादि शब्द मध्यम )

निकाई तिहारी परवारी जातिँ रम्भा रमा
रञ्चक दया सों हियें सुख सरसाइ दै।

इसमें आरम्भ में 'निकाई' शब्द यगण (।ऽऽ) का होने के कारण गति को मध्यम श्रेणी को करदेता है॥

( चार वर्णों पर यगणादि शब्द मध्यम )

जोमभरी जवानी जुलम कियें डारति है
जोवन कौ कछुक जकात करि चाइ दै॥

इसमें चार अक्षरों के पश्चात् 'जवानी' शब्द यगण (। ऽ ऽ) का है अतः गति मध्यम हो जाती है॥

इसी प्रकार से आठ बारह इत्यादि वर्णों के पश्चात् समझ लेना चाहिये॥

प्रथम नियम का प्रतिप्रसव।

चार वर्ण को शब्द इक
तहँ यह नियम न जानि।
पै केवल गुरुअन्त में
मध्यम गति मन मानि॥

अर्थ—यदि आरम्भ में या चार आठ इत्यादि वर्णों के पश्चात् ऐसा शब्द आवे कि जो चार अक्षर का पूरा एक शब्द हो तो जगण, तगण, मगण तथा यगण के आरम्भ में पड़ने के विषय में जो बातें प्रथम नियम में कही गई हैं उसमें न माननी चाहियें। परन्तु यदि उसके अन्त का वर्ण गुरु हो तो गति मध्यम हो जाती है॥

## उदाहरण।

( चार वर्णों का जगणादि शब्द निर्दोष )

"छपाकर छत्र मोती झालर नछत्र मानो इत्यादि"

इसमें आरम्भ में यद्यपि 'छपाकर' शब्द जगणादि (I S I) है तथापि चार अक्षर का पूरा शब्द होने के कारण निर्दोष है॥

( चार वर्णों का तगणादि शब्द निर्दोष )

"चामीकर देखि कै लजात रूप रावरो है इत्यादि।"

इसमें आरम्भ में यद्यपि 'चामीकर' शब्द तगणादि (S S I) है तथापि चार वर्णों का एक शब्द पूरा होने के कारण निर्दोष है॥

( चार अक्षरों का यगणादि शब्द मध्यम नहीं )

"निराधार प्राण विन प्रीतम रहेंगे किमि इत्यादि।"

इसमें आरम्भ में यद्यपि 'निराधार' शब्द यगणादि (ISS) है तथापि चार अक्षरों का पूरा शब्द होने के कारण मध्यम नहीं है॥

( चार अक्षरों का मगणादि शब्द मध्यम नहीं )

"पारावारपूरन अपार पारब्रह्मरासि इत्यादि।"

इसमें आरम्भ में जद्यपि 'पारावार' शब्द मगणादि (S S S) है तथापि चार अक्षरों का पूरा शब्द होने के कारण मध्यम नहीं है॥

इसी प्रकार से चार, आठ इत्यादि वर्णों की पश्चात् जानना चाहिये ॥

( चार वर्णों का जगणादि तथा गुर्वन्त शब्द मध्यम )

विभावरीसङ्गकोकसोकलाग्यो बाढ़न है इत्यादि ।

इसमें आरम्भ में 'बिभावरी' जगणादि (। ऽ ।) शब्द यद्यपि चार अक्षर का पूरा है तथापि अन्त में गुरु होने के कारण मध्यम है ॥

( चार वर्णों का तगणादि तथा गुर्वन्त शब्द मध्यम )

धर्म्मध्वजाधारी ह्वै विचारत न बात नेक इत्यादि

इसमें आरम्भ में 'धर्म्मध्वजा' तगणादि (ऽ ऽ ।) शब्द यद्यपि चार अक्षर का पूरा है तथापि गुर्वन्त होने के कारण मध्यम है ॥

( चार अक्षर का मगणादि तथा गुर्वन्त शब्द मध्यम )

"धर्माचारीधर्मकीकहानीकहैंलाखभाँतिइत्यादि"

इसमें आरम्भ में 'धर्म्माचारी' मगणादि ( ऽ ऽ ऽ ) शब्द यद्यपि चार अक्षर का पूरा है तथापि गुर्वन्त होने के कारण मध्यम है ॥

( चार अक्षरों का यगणादि तथा गुर्वन्त शब्द मध्यम )

समाधानी करत रहत समाधान सदा इत्यादि ।

इसमें आरम्भ में 'समाधानो' यगणादि शब्द यद्यपि चार अक्षरों का पूरा है तथापि गुर्वन्त होने के कारण मध्यम है॥

इसी प्रकार से चार, आठ इत्यादि अक्षरों के पश्चात् समझ लेना चाहिये॥

---

## दूसरा नियम।

पाँच वर्ण पर शब्द जो
पूरन, तामें आनि।
लघु गुरु दीजे अन्त में,
गुरु गुरु मध्यम मानि॥

अर्थ—यदि कोई शब्द पांच, नव, तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस अथवा उन्तीस अक्षर पर समाप्त हो तो उस शब्द के अन्त में लघु गुरु (। ऽ) पड़ना चाहिये और यदि गुरु गुरु (ऽ ऽ) अर्थात् दो गुरु उसके अन्त में पड़ें तो यद्यपि उसकी गति सर्वथा तो नहीं नष्ट होती तथापि मध्यम श्रेणी की अवश्य हो जाती है॥

उदाहरण।

(निर्दोष)

"सिन्धु को सपूत सुत
सिन्धुतनया को बन्धु इत्यादि।"

इसमें 'तनया' शब्द तेरह अक्षरों पर समाप्त होता है और उसके अन्त में लघु गुरु (। ऽ) है॥

(मध्यम)

आज सुदामा के खाइ
तन्दुल अघाने इमि इत्यादि।

इसमें 'सुदामा' शब्द पांच वर्ण पर समाप्त हुआ है और उसके अन्त में दो गुरु हैं अतः गति मध्यम हो गई है॥

(दूषित)

निरखि श्याम सुघर धीरज धरै न मन इत्यादि।
निरखि मृदु निकाई धीरज धरै न मन इत्यादि।

इनमें 'श्याम' तथा 'मृदु' शब्द पांच पांच पर समाप्त हुए हैं परन्तु उनके अन्त में लघु गुरु (। ऽ) अथवा दो गुरु (ऽ ऽ) नहीं हैं अतः गति बिगड़ गई है॥

इसी प्रकार से नौ, तेरह, सत्रह इत्यादि अक्षरों पर समाप्त होनेवाले शब्दों के विषय में समझ लेना चाहिये॥

---

## तीसरा नियम।

पाँच वर्ण पर शब्द जो
एक वर्ण को नाहिं।
तो लघु सों आरम्भियै
करि बिचार मन माहिं॥

अर्थ—पांच, नौ, तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस, तथा उन्तीस वर्णों के पश्चात् जो शब्द आवे वह यदि एकही वर्ण का हो तो चाहे लघु हो चाहे गुरु परन्तु यदि एक अक्षर से अधिक का हो तो उसके आदि में लघु होना चाहिये॥

उदाहरण।

(निर्दोष)

"गोरस को लूटिवो न छूटिवो छरा को गनै टूटिवो गनै न मुकताहल की माल को। कहै पदमाकर गुवालिनि गुनीली हेरि हरषे हँसे यों करै झूठे झूठे ख्याल को॥ हाँ करति ना करति नेह कौनसा करति साँकरी गली मैं रङ्ग राखति

रसाल को । दीबो दधिदान को सु कैसें मन भावै ताहि जाके मन भायो भार झगरो गुपाल को ॥"

इस कवित्त में पहिले पद में तेरह अक्षरों पर 'को' शब्द दूसरे चरण में इक्कीस अक्षरों पर 'यों' शब्द तथा तीसरे तुक में इक्कीस अक्षरों पर 'मैं' शब्द गुरु रूप से आये हैं; और पहिले चरण में 'न' शब्द इक्कीस अक्षरों पर लघु आया है। तीसरे चरण में एक, पांच, तथा तेरह अक्षरों के पश्चात् एक अक्षर से अधिक का 'करति' शब्द लघु से आरम्भ होता है ॥

( दूषित )

मेघ बरसै बीर बड़ी बड़ी है बूँद लखो इत्यादि।

इसमें 'बीर' शब्द पांच वर्णों के पश्चात् गुरु से आरम्भ होता है अतः गति दूषित हो जाती है ॥

इसी प्रकार से नौ, तेरह इत्यादि के पश्चात् समझ लेना चाहिये ॥

## चौथा नियम।

**दोय वर्ण पश्चात जो**
**परै शब्द कोउ आनि।**
**ज, त, म, य, ताके आदि में**
**मध्यम गति जिय जानि॥**

अर्थ—दो, छः, दस, चौदह, अट्ठारह, बाइस, तथा छब्बीस वर्णों के पश्चात् यदि कोई शब्द आवे तो उसके आदि में जगण ( । ऽ । ), तगण ( ऽ ऽ । ), मगण ( ऽ ऽ ऽ ), तथा यगण ( । ऽ ऽ ) मध्यम गति के होते हैं॥

### उदाहरण।

( दो अक्षर पर जगणादि शब्द मध्यम )

देखि निकुञ्जन की अनूप सुखमा को रूप
हिय में हुलास वाढ्यो कहत बनै नहीं।

इसमें दो अक्षर के पश्चात् 'निकुञ्जन' शब्द जगणादि ( । ऽ । ) होने के कारण मध्यम है॥

( दो अक्षर के पश्चात् तगणादि शब्द मध्यम )

घेरि आकासहिँ राख्यो सरस घनेरी घटा
चपला चमंकैं चख चहत बनै नहीं ॥

इसमें दो अक्षरों के पश्चात् 'आकासहिँ' शब्द तगणादि (ऽ ऽ ।) होने के कारण मध्यम है ॥

( दो अक्षरों पर मगणादि शब्द मध्यम )

गञ्जैं सारङ्गीनि मञ्जु गुञ्जैं यों भँवर भीर
केकी सहनाई सुर रञ्जक गनै नहीं ।

इसमें दो अक्षर के पश्चात् 'सारङ्गीनि' शब्द मगणादि (ऽ ऽ ऽ) होने के कारण मध्यम है ॥

( दो अक्षरों के पश्चात् यगणादि शब्द मध्यम )

ऐसी निकाईहिँ लखि मान तजि एरी बीर
जोगी जनहूँ सों सुनि धीरज ठनै नहीं ।

इसमें दो अक्षरों के पश्चात् 'निकाईहिँ' शब्द यगणादि (। ऽ ऽ) होने के कारण मध्यम है ॥

इसी प्रकार छः, दस, इत्यादि के पश्चात् समझ लेना चाहिये ॥

## पाँचवाँ नियम।

**तीन वर्ण पर शब्द जो**

**ताके लघु गुरु आदि।**

अर्थ—तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, उन्नीस, तेइस तथा सत्ताइस अक्षरों के पश्चात् जो शब्द आवे और एक अक्षर से अधिक का हो तो उसके आरम्भ में लघु गुरु (। ऽ) का होना आवश्यक है। पर यदि एकही अक्षर का शब्द हो तो उसके लिये कुछ नियम नहीं है॥

### उदाहरण।

(निर्दोष)

"सोभा को सकेलि ऊँची वेलि बाँधी बलि-

भद्र राख्यो सस लोचन कुरङ्गनि को रोस है।

दीपति को दीपक कै मुख दीप को सुमेरु मृदु

मुख सारस को सिफाकन्द जोस है॥ कलप-तरो-

वर की कली कैधों कुन्द फली उपमा अनूपनि

को विविध निसोस है। तिल को सुमन है कि

नासिका तरुनि तेरी मुख की सरन कैधों सौरभ

को कोस है॥"

इसमें प्रथम चरण में तीन अक्षर के पश्चात् 'सकेलि' शब्द और तेइस अक्षर के पश्चात् 'कुरङ्ग' शब्द, और तीसरे चरण में तीन अक्षर के पश्चात् 'तरोवर' शब्द, उन्नीस अक्षर के पश्चात् 'अनूपनि' शब्द, और सत्ताइस अक्षर के पश्चात् 'निसोस' शब्द लघु गुरु ( । S ) से आरम्भ होते हैं॥

दूसरे चरण में तीन अक्षर पर 'कों' शब्द, सात अक्षर पर 'कै' शब्द तथा तेइस अक्षर पर 'को' शब्द गुरु पड़े हैं; और चौथे चरण में सात अक्षर पर 'कि' शब्द लघु है। एक अक्षर के होने के कारण दोनों रूप निर्दोष हैं॥

इसी प्रकार और स्थानों पर भी समझ लेना चाहिये॥

( दूषित )

सरस बन लसत नाचत मयूरगन इत्यादि।

सरस कुञ्जनि लखि नाचत मयूरगन इत्यादि।

सरस आकाश लसै नाचत मयूरगन इत्यादि।

इनमें तीन अक्षरों के पश्चात् 'बन' 'कुञ्ज' तथा 'आकाश' शब्द लघु गुरु ( । S ) से नहीं आरम्भ होते अतः गति बिगड़ जाती है॥

इसी प्रकार से और स्थानों पर भी समझ लेना चाहिये॥

पाँचवें नियम का प्रतिप्रसव।

**होइ नगण को शब्द तो**
**जात नहीं सो बादि।**

अर्थ—यदि तीन अक्षर के पश्चात् नगण (।।।) का पूरा एक शब्द आवे तो उसको छोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है, अर्थात् यद्यपि उसके आरम्भ में लघु गुरु (। ऽ) नहीं होता तथापि उसका रखना निर्दोष है॥

जैसे, 'सोभा को सकेलि' आदि, ऊपर के कवित्त के चौथे चरण में तीन अक्षर के पश्चात् 'सुमन' शब्द तथा ग्यारह अक्षर के पश्चात् 'तरुनि' शब्द तीन लघु के पूरे शब्द होने के कारण निर्दोष हैं॥

इसी प्रकार और स्थानों पर समझ लेना चाहिये॥

---

ये नियम जो ऊपर लिखे गये हैं उनके विषय में यद्यपि यह कहना कदाचित् अनुचित साहस समझा जाय कि ये पूर्णतः सम्यक् और

अकाथ्य हैं तथापि इतना कहना विशेष विवाद का कारण न माना जायगा कि यदि इन नियमों पर भलीभांति ध्यान रखकर उत्तम कवित्त बनाया जाय तो आशा है कि उसकी गति में खटक न प्रतीत होगी॥

इसमें सन्देह नहीं कि किसी किसी उत्तमोत्तम कवि के कोई कोई कवित्त ऐसे प्राप्त होते हैं जिनके अक्षर इन नियमों के विरुद्ध पड़े हैं, परन्तु कानों में उनकी गति खटकती अवश्य है; अतः इन नियमों को भंग करके उनका अनुकरण करना उचित नहीं है, वरन उनको आर्षवत् समझकर चुप हो रहना चाहिये॥

उदाहरण।

"पामरिनि पाँवड़े परे हैं पुरपौरि लगि धाम धाम धूपनि के धूम धुनियतु है। कस्तूरी अतरसार चोवारस घनसार दीपक हजारनि अँध्यार लुनियतु है॥ मधुर मृदङ्ग राग रङ्ग की तरङ्गनि

में अङ्ग अङ्ग गोपिन के गुन गुनियतु है। देव सुख साजि महाराज ब्रजराज आज राधे जू के सदन सिधारे सुनियतु है॥"

इस कवित्त के दूसरे चरण के आरम्भ में 'कस्तूरी' शब्द मगनात्मक होने के कारण प्रथम नियम के अनुसार मध्यम गति का कारण होता है॥

पुनः।

"प्रथम सिँगार नौहू रसनि को सार जाको नायिका अधार सो जो नायक के सङ्ग है। संजोग, वियोग सो सिँगाररस है विध, वियोग चारि विध, अरु संजोग इकङ्ग है॥ पूरवानुराग, मान, प्रवास, करुन, मिल्यो चौविध वियोग, दस दसनि के रङ्ग है। हाव, भाव भोग, उपभोग, सबिलास, हास, विविध सँजोग सुखसागरतरङ्ग है॥

इस कवित्त के दूसरे पाद के आरंभ में तथा चौबीस वर्णों के पश्चात् 'संजोग' शब्द तगणात्मक (ऽ ऽ ।) होने के कारण, और तीसरे पाद में आठ वर्णों के पश्चात् 'प्रवास' शब्द जगणात्मक (। ऽ ।) होने के कारण, प्रथम नियमानुसार, गति को बिगाड़ देते हैं॥

पुनः।

"त्रिभुवनभागु बरसतु बरसाने दरसतु रङ्ग रागु सरसतु है सुहागु मुनि। इन्द्र जम बरुन कुबेर सेस बासरेस वारियै सुमेर कैलासहू को चमक चुनि॥ संकेत निकेत सुख देत हरि हेत करि राधिका समेत मृदु मंगल मृदंग धुनि। चमकैं चहूँघा मनि मोती कनकादि गुन गाहैं गनकादिक सराहैं सनकादि मुनि॥"

इस कवित्त के तीसरे पाद के आरंभ में 'संकेत' शब्द तगणात्मक होने के कारण प्रथम नियम के विरुद्ध है। दूसरे चरण के छब्बीस वर्णों के पश्चात् 'कैलास' शब्द तगणात्मक होने के कारण चौथे नियमानुसार गति को मध्यम कर देता है॥

यह बात यहां ध्यान देने के योग्य है कि ऊपर लिखे हुए नियमों के विरोधी उदाहरणों में अधिकांश प्रथम तथा चतुर्थ ही नियम के भंग करनेवाले प्राप्त होते हैं; और नियमों के तोड़नेवाले कवित्त बहुतही खोज करने से मिलें तो मिलें। इसका मुख्य कारण यह है

कि चौथे नियम के भंग होने से तो गति केवल मध्यम श्रेणी की हो जाती है सर्वथा नष्ट नहीं होती, और प्रथम नियम के भी एक अंशही के भंग होने से गति बिगड़ती है; पर यह बिगड़ना भी ऐसा नहीं है जैसा और नियमों के भंग होने से होता है। हमारी समझ में मध्यम श्रेणी की अपेक्षा थोड़ाही अधिक बिगाड़ इसमें पड़ता है, जिसके कारण इसको मध्यम श्रेणी से नीचे कर दिया है॥

पाँचवें नियम के भंग होने का उदाहरण।

"चण्डकर मण्डल तें ग्रीषम प्रचण्ड धाम घुमण्यो परत भूमिमण्डल अखण्ड धार। भौन तें निकुञ्ज भौन लहलही डारनि ह्वै टुलही सिधारी उलही ज्यों लहलही डार॥ नूतन महल नूत पल्लवनि ह्वै ह्वै सेट लवनि सुखावत पवन उपवन सार। रूप की वनक मनि कनक नूपर पाय आइ गई झनकमनकनि झनकवार॥"

इस कवित्त के चौथे पाद में ग्यारह अक्षरों के पश्चात् 'नूपुर' शब्द लघु गुरु (। ऽ) से आरम्भ न होने के कारण

पांचवें नियम के विरुद्ध होकर गति को बिगाड़ देता है; परन्तु तीन अक्षर का एक शब्द पूरा होने के कारण किसी प्रकार खींचखांच कर पढ़ लिया जाता है; पर अनुकरण करनीय कदापि नहीं है ॥

इसी प्रकार से और नियमों के विषय में भी समझ लेना चाहिये ॥

---

एक यह बात अन्त में और भी ध्यान देने के योग्य ज्ञात होती है कि यद्यपि प्रस्तार के अनुसार जितने रूप घनाक्षरी के हो सकते हैं वह सबही आ सक्ते हैं तथापि बहुत से गुरु या बहुत से लघु एक ही स्थान पर आने से कुछ रोचकता में विघ्न पड़ता है। अतः इस बात पर ध्यान रखना चाहिये कि बारह से अधिक गुरु तथा चौबीस से अधिक लघु एकत्रित न हो जायँ तो अच्छी बात है। दस गुरु तथा तेइस लघु तक के एकत्रित पड़ने के उदाहरण प्राप्त होते हैं ॥

दस गुरु।

"सोई सही राजा दानधारा ना रुकत जाकी जुद्धजसधारा देवदारा देखि मोवतीं। कवि

हरिकेस कहै सोई सही राजा जाके प्रजा ध्रुव धरमध्वजा की छाँह सोवतीं ॥ ऐसे तो कहावतै हैं कोढ़ी राजा कोरी राजा घर घर राजा मानि मैया मुख जोवतीं । सुमिरि सुमिरि चमरैलिया कुरैलियाह्न मूए मैं खसम राजा राजा कहि रोवतीं ॥"

इसके तीसरे पाद में छः अक्षर के पश्चात् दस गुरु एकत्र पड़े हैं ॥

तेइस लघु ।

"लोल दृग लोलति अलक झलकति छबि छलकति श्रुतिमनिकिरन कपोल मैं । दीपति ललाट तें छटलि विवंटति पट नटत किसोर भृकुटीतटकलोल मैं ॥ आज ब्रजभूषन सों नवलकिसोरी होरी खेलति हँसति विहँसति वर वोल मैं। रङ्गभार झेलति पछेलति अलीनि चलि मेलति गुलाल मिलि जाति पुनि गोल मैं ॥"

इसके प्रथम पाद में पांच अक्षरों के पश्चात् तेइस लघु एकत्र पड़े हैं ॥

प्रिय पाठकगण! जिस प्रकार से साहित्य के पढ़ने से कबि शुद्ध तथा लक्षणयुत काव्य बनाने को समर्थ हो जाता है, परन्तु उसके काव्य में विशेष रूप से रमणीयता तथा हृदयग्राह्यता का उत्पन्न होना, उसकी प्रतिभा पर निर्भर है; उसी प्रकार से इन नियमों को जानने और इन के अनुसार कवित्त बनाने से कवित्त की गति निर्दोष तथा खटकरहित तो अवश्य होगी, परन्तु उसमें विशेष लालित्य, लोच, रोचकता, तथा विषयानुकूलतादि गुणों का आना बनाने वाले के अनुभव, सुघरता, सहृदयता तथा अभ्यास और निपुणतादि पर निर्भर है। किस स्थान पर किस प्रकार का कौन शब्द किस प्रकार के किस शब्द की अपेक्षा अधिक योग्यता रखता है यह बात नियमों से कदापि नहीं जानी जा सकती। इसके निमित्त कवि को अपने हृदय में स्वयं बिचार करके अनुभव करना चाहिये, और उन कवियों के कवित्त की गति

अपने चित्त में भली भाँति स्थापित करनी चाहिये जो कि कवित्त की चाल ढाल में अति निपुण थे; जैसे पद्माकर, पजनेस, तथा बुन्देलखण्डी किशोरादि ॥



# विज्ञापन ।

इस पुस्तक पर एक्ट २५ सन् १८६७ ई० के अनुसार रेजिष्टरी कराई गई है और सर्व प्रकार का स्वत्व ग्रन्थकर्ता ने स्वाधीन रक्खा है। अतः निवेदन है कि कोई महाशय विना ग्रन्थकर्त्ता की अनुमति इसको अथवा इसके अभिप्राय को रूपान्तर से मुद्रित करने का कष्ट न उठावें ।

ग्रन्थकर्ता

# घनाक्षरी नियम रत्नाकर का मूल्य निरूपण ।

| | |
|---|---|
| राजाओं महाराजाओं से | १००) |
| अमीर रईसों से | ५) |
| सर्वसाधारण से | १) |
| अशक्यों से | ।) |
| महा अशक्यों से केवल डाक व्यय | )॥ |

विदित रहे कि काशी कविसमाज के सभ्यों को यह पुस्तक श्री १०८ गोस्वामी बालकृष्ण-लालजी महाराज की आज्ञानुसार विना मूल्य बाँटी गई है ॥

मिलने का ठिकाना
बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकर बी०ए०,
शिवालयघाट, बनारस ।

# इश्कनामा बोधाकृत।

अर्थात्।

वियोग शृंगार की अनूठी कविता।

श्रीमान् बाबू चन्द्रेश्वरप्रसादसिंह रईस
चैनपुर के प्रसन्नतार्थ डुमरांवनिवासी
नकछेदी तिवारी द्वारा प्रकाशित।

"यह प्रेम को पंथ करार है री तरवार की
धार पै धावनो है।"

यह पुस्तक भारतजीवन प्रेस के अधिकार
में छपी और उसी प्रेस मे मिलैगी।

काशी।

भारतजीवन प्रेस में मुद्रित हुआ।

सन् १८९३ ई०।

प्रथम बार ११०० पुस्तक दाम ।)

# भूमिका

श्रीबोधा कवि जी की कविता को सुकवि-समाज मे सत कवि कविता सहित पढ़ी जाती और आदर पाती तथा सुहृदजनों के चित्त लोभाती देख मेरे जी मे अत्यन्त उत्कण्ठा हुई कि उक्त कवि जी की स्वतन्त्र पुस्तक तथा जीवनचरित्र सर्वसाधारण मे प्रकाशित किया जाता। निदान मै इस बात के पीछे पड़ा जिस्का परिणाम आज दिन यह हुआ कि अश्वनीवासी श्री स्यामसुन्दर मिश्र वैद्यजी के द्वारा यह पुस्तक तथा बुन्देलखंडी कवि लोगों के जबानी कुछ जीवनचरित्र प्राप्त हुआ जो आप लोगों के अवलोकनार्थ प्रकाशित किया जाता है।

इन के जीवनचरित्र के विषय मे प्राय: बुन्देलखंडी कवि लोग कहते हैं कि बोधा कवि जी (बुद्धसेन) सरवरिया ब्राह्मण राजापुर प्रयाग के रहनेवाले थे किसी घनिष्ट संबंध के कारण बाल्याऽवस्थाही मे निज भवन को छोड़ बुन्देलखंड की राजधानी पन्ना मे जा पहुंचे। वहां पर इनके संबंधियों की दरबार मे बड़ी प्रतिष्ठा थी, एतावता ये भी जाने लगे। संस्कृत भाषा और फार्सी में इनका परिश्रम अच्छा था इसके अतिरिक्त भाषा कविता उत्तम

करने लगे इत्यादि गुणों से महाराजा साहब बहुत मानने लगे; यहां तक कि मारे प्यार के बुद्ध सेन से बोधा कहने लगे तब से इनका नाम बोधा प्रसिद्ध हुआ।

उस दरबार में "सुभान" नामक एक यमनी बेश्या रहती थी उससे इन से आंख लग गई। यह बात महाराजा साहब के कान तक पहुंची बोधा जी खफ़गी मे पड़े इनके लिये छ महीने तक शहरबदर का हुकुम हुआ आराम और प्रतिष्ठा की कुंजी खोगई पर ये अलमस्त कई धन के धनी इस पद को पढ़ते "जो धन है तो गुनो बहुतै अरु जो गुन है तो अनेक हैं गाहक" "सुभान" के घर पर अपना बोरिया बधना बांधे पहुंचे, और सारा हाल कहकर साथ चलने की सलाह पूछी, पर बेश्या की जात निहायत चालाक और मतलबी; वह क्यों इनके फ़िकरे मे आती? और इनके साथ जाती थी; छूटतेही बोली कि आप कवि हैं फिर भी छ महीने का समय है नियमित समय व्यतीत होजाने पर आप आ सक्ते हैं पर मेरा कच्चा जवाहिर, दम भर मे तबदील होनेवाला है। फिर भी अभी मेरे लिये कोई हुकुम सादिर नहीं हुआहै इसलिये आप के साथ मेरा चलना ठीक नहीं।

"सुभान" की ऐसी निठुरता देख इन के जी मे चण मात्र तो रंज हुआ लेकिन परमानुरागी स्वभाव कब मनता

था; आप अकेले निकल पड़े। "सुभान" के वियोगानल में अपना तन मन जलाते जंगल, पहाड़ दरिया और अनेक शहरों की खाक छानी और इश्कनामा, तथा माधवानल का आश्रय लेकर "विरह वारीश" नामक अद्वितीय पुस्तक बनाई।

नियमित समय व्यतीत होने पर आप दरबार पन्ना में हाज़िर हुए। उस समय "सुभान" भी उपस्थित थी महाराज ने कुशलता पूछी इन्होंने छूटतेही 'विरह वारीश" को तरंगित किया फिर क्या पूछना था सब के सब गोता खाने लगे। बोधा जी के और सुभान के नेत्रों से आंसू की धारें जारही थीं निदान कुछ देर के बाद महाराज ने कहा कि 'बोधा जी बस कीजिये बहुत हुआ अब कुछ मांगिये' जब ऐसी बात कई बार महाराज ने कही और बोधा जी ने इस बात पर महाराज को दृढ़ देखा तो कहा कि 'सुभान अल्लाह'।

शीलसागर परमप्रतिज्ञ महाराजा साहब बहादुर ने स्वीकार कर 'सुभान" को इनके साथ रहने की आज्ञा दे दी। तब से स्वदेशीय राजधानियों में सुभान के साथ घूमते और अपना जीवन व्यतीत करते रहे। अंतमें पन्नामें आकर स्वर्गवासी हुए।

ठाकुर शिवसिंह सेंगर इन्स्पेक्टर पुलीस ने अपने ग्रन्थ मे अन्दाजी सं: १८०४ लिखा और इनकी जीवनी तथा ग्रंथों के विषय मे कुछ भी नहीं लिखा है इस से इनके सम्वत् मे मुझे बिलकुल शक है।

सम्प्रति कविसमाज मे विरह वारीश की बड़ी तलाश है अतएव पाठकमात्र से निवेदन है कि उक्त पुस्तक तथा इनके पूर्ण जीवनचरित्र को प्रकाश करने का उद्योग करें।

आपलोगों का कृपापात्र
नकछेदी तिवारी
डुमरांव जिला शाहाबाद
२५—१२—९३—ई०।



श्रीगणेशाय नमः

# इश्क़नामा बोधाकृत

## दोहा।

जिन जाने तिन मानिहैं मानै नहीं अजान ।
कसकत ताही के हिये जा हिय बेधो बान ॥१॥
उपजै इश्क जु अंग तै रहत अङ्ग के बीच ।
हाड़ मास गलिबो करै इश्क न जानत नीच ॥

## सवैया।

अति छीन मृनाल के तारहु ते तेहि ऊपर पाँव दै आवनो है। सुई बेह ते द्वारम कीन तहां परतीति को टांड़ो लदावनो है ॥ कवि बोधा अनी घनी नेजहुं ते चढ़ि तापै न चित्त डरावनो है। यह प्रेम को पन्थ कराल महा तरवार की धार पै धावनो है ॥ ३ ॥

घर मै नर मै सर मै तरु मै गजराज मै बाज मै जानि परै। सुक सारो मयूर कपोतन मै मृग

केहरि और जा चित्त अरै ॥ कबि बोधा बजाइ कै प्रीति करै यह आतमज्ञान हिये मे धरै ॥ हम रामदोहाई न झूठी कहैं यह प्रीति सो मात तरै पै तरै ॥ ४ ॥

उपचार औ नीच विचारने ना उर अन्तर वा छवि को घर है। हमको वह चाहै कि चाहै नहीं हम चाहिये वाहि बिथा हर है ॥ कबि बोधा कछू सक यामै नहीं भवसिंधु बजाइ कै लै तरहै। यह प्रीति की रीतिहि जानत सो परतीतहि मानि कै जो करहै ॥ ५ ॥

करि प्रेम वही की वटा करवी पतवारी प्रतीति कै लै भिलि हैं। पुनि दूर विज्ञान अ-रावो अहो जलजन्तुन के मुख मे ढिलि हैं ॥ कवि बोधा उसी दिल माहिर को नौका भव-सिंधु मै लै पिलि हैं। हम रामदोहाई न झूठी कहैं व्रजराज सो बाँधि धुजा मिलिहैं ॥ ६ ॥

वरहो कर प्रीति पयोधर सों परलै व्रजराज के माथे मढ़ै। पुनि राग सों प्रीति कुरंग करी वह

राग कुरंग के श्रिंग कढ़ै ॥ कवि बोधा न कौल अनोखो करी यह प्रीति की रीति बिरंचि रढ़ै । जब आसकी तेरी सई की करैं तब काहे न संभु के सीस चढ़ै ॥ ७ ॥

बरवै ।

प्रीति करै कमलनि कसि, तनु मनु पोस ।
तब कस चढ़ै न मितवा, सिव के सीस ॥

सवैया ।

वह प्रीति की रीति को जानत थो तबही तो बच्यौ गिरिढाहन तैं । गजराज चिकारि कै प्रान तज्यौ न जर्‌यौ संग होलिकादाहन तैं ॥ कबि बोधा कछू न अनोखो यहै का बनै नहीं प्रीति निबाहन तैं । प्रह्लाद की ऐसी प्रतीति करै तब क्यौं न कढ़ै प्रभु पाहन तैं ॥ ८ ॥

यह प्रेम को पन्थ हलाहल है सु तौ वेद पुरानऊ गावत हैं । पुनि आँखिन देखौ सरोजन लै नर संभु के सीस चढ़ावत हैं ॥ बरही-पर माथे चढ़ै हरि के फल जोग ते एते न पावत हैं।

तुम्है नीकी लगै ना लगै तौ भले हम जान अ-जान जनावत हैं ॥ १० ॥

शत यज्ञ करे ते सुरेस भये करे जोग ते जीव जिआवत है। दिये दान के दौलति होति घनी तप के किये राज को पावत है ॥ कवि वोधा सुतौ हम चाहत ना परतीति कै प्रेम बढ़ावत है। तुम्है नीकी लगै न लगै तौ भले हौं अजान न जान जनावत है ॥ ११ ॥

सोरठा ।

विछुरे दरद न होत, खर सूकर कूकरन कों।
हंस मयूर कपोत, सुघर नरन विछुरन क़ठिन॥

दोहा ।

लगनि वहै यक एक लगि दूजे ठौर वढ़ै न।
कीच बीच जैसे गुरा खचकै फिरि उचटै न॥

सवैया ।

लोक की लाज औ सोच प्रलोक को वारिये प्रीति के ऊपर दोऊ । गांव को गेह को देह को नातो सनेह मैं हाँतो करै पुनि सोऊ ॥

बोधा सुनीति निबाह करै धर ऊपर जाके नहीं सिर होऊ । लोक की भीति डेरात जो मीत तौ प्रीति के पैंड़े परै जनि कोऊ ॥ १४ ॥

दोहा ।

नेहा सब कोऊ करै कहा करै मै जात ।
करिबो और निबाहिबो बड़ी कठिन यह बात॥

सवैया ।

तैं अब मेरी कही नहिं मानति राखति है उर जोम कछू री । सो सब की छुटि जात भटू जब दूसरो मारि निकारत भूरी ॥ बोधा गुमान भरी तब लौं फिरिबो करौ जौलौं लगी नहीं पूरी । पूरी लगे लखु सूरन की चकचूर ह्वै जात सबै मगरूरी ॥ १६ ॥

बरवै ।

जौलौं लगी न पूरी, बढ़ी न पीर ।
तौलौं तुही कजाकी, करि लै वीर ॥ १७ ॥

सवैया ।

कहिबे को व्यथा सुनिबे को हँसी को दया

सुनि कै उर आनतु है । अरु पीर घटै तजि धीर सखी दुख को नहीं कापै बखानतु है ॥ कवि बोधा कहै मे सवाद कहा को हमारी कहो पुनि मानतु है । हमै पूरी लगी कै अधूरी लगी यह जीव हमारोई जानतु है ॥ १८ ॥

तव नेह नफा दिल मोल कियो छवि आपनी लैकै वयानै दई । पुनि माल लै दाम चुकायो नहीं मुलाकात चिन्हारऊ भूलि गई ॥ घटै कीमति बोधा जो माल फिरै वजि कै वयपार मै टूट ठई । उनको पै वनै हम यों समझैं मनु वेचो न जानी कि लूटि भई ॥ १९ ॥

काहू सों का कहिये अब ये यह बात अनैसी कहे ते कहावत । कोऊ कहा कहि है सुनिहै कही काहू की कौनो हमैं नहीं भावत ॥ वोधा कहे को परेखो कहा दुनिया सव मास की जीभ चलावत । जाहि को जाकि हितू ने दई वह छोड़े वनै नहि ओढ़ने आवत ॥ २० ॥

घाटन वाटन हाटन मैं मृगतृष्णा तरङ्गिनि

लौं तरियै लै। पै वह चाउ नहीं बिसरै भरमै भ्रम की भवरी भरियैलै॥ बोधा कहै ढिग कौन कै या दुख की गरुवी डलिया धरियैलै। जो न मिलो दिलमाहिर एक अनेक मिलै तो कहा करियै लै॥ २१॥

बरवै।

बोधा सब जग ढूंढ्यौ, फिरि फिरि धाइ।
जेहि मनही मन चाहत, सो न लखाइ॥२२॥

सवैया।

कूर मिले मगरूर मिले रनसूर मिले धरे सूर प्रभा को। ज्ञानी मिले औ गुमानी मिले सनमानी मिले छबिदार पता को॥ राजा मिले अरु रङ्क मिले कवि बोधा मिले निरसङ्क महा को। और अनेक मिले तौ कहा नर सो न मिल्यौ मन चाहत जाको॥ २३॥

बरवै।

सब जग देख्यौ बोधा, एक न दीख।
देह भिखारी दिल को, दरसन भीख॥ २४॥

कवित्त।

हिलिमिलि जानै तासों हिलिमिलि लीजै आप हिलिमिलि जानै ऐसो हितू ना बिसाहिये। होय मगरूर तासों दूनो मगरूरी कीजै लघुता ह्वै चलै तासों लघुता निवाहिये॥ बोधा कवि नीति को निवेरो एहि भांति करो आप को सराहै ताहि आपहू सराहिये। दाता कहा सूर कहा सुन्दर प्रवीन कहा आप को न चाहै ताहि आपहू न चाहिये॥ २५॥

इति प्रथम खण्ड।

---

अथ द्वितीय खण्ड। सवैया।

रितु पावस स्यामघटा उनई लखि कै मन धीर धिरातो नहीं। पुनि दादुर मोर पपीहन की सुनि कै धुनि चित्त थिरातो नहीं॥ जब ते बिछुरे कवि बोधा हितू तब ते उर दाह थिरातो नहीं। हम कौन सों पीर कहैं अपनी दिलदार तौ कोउ दिखातो नहीं॥ १॥

एक सुभान के आनन पै कुरबान जहां लगि रूप जहां को। कैयो सतक्रतु की पदवी लुटियै तकि कै मुसकाहट ताको ॥ सोक जरा गुजरा न जहां कवि बोधा जहां उजरान तहां को। जान मिलै तौ जहान मिलै नहि जान मिलै तौ जहान कहां को ॥ २ ॥

छन्द।

कुनहदार अनियारी आछी खुसी करै दिल खूबौं सों। खिलवित खिनखिन खूबी वारो राखै इश्क हबूबौं सों। मस्ताने प्रेम दिवाने जे तिन जानै मन मनसूबौं सों। कवि बोधा अ-रज सुबुन्द हिये उन माहिरवां महबूबौं सों ॥३॥

पहिचाने प्रेम रकाने जे बेपरद दरद दरियाव हिलै। मगरूर दिखाते आखिर या दिलसूर प्रेम को पन्थ पिलै ॥ तकि तवियेदार उदार वाहि अरु गनै न धक दै नैन झिलै। तब खूब इश्क बोधा आसिक जब महिरबान महबूब मिलै॥४॥

बतराते बुँदी बतासा हँसते बरफी रंचु रुखाई

को । तकते सव सेव समुकुता को गुलसंकरिया चतुराई की ॥ अब ऐठनि प्रीति दुकानदार लखि महवूवां हलवाई को । कवि बोधा अजव मजा पाया जिन लूटी हाट मिठाई को ॥५॥

बरवै ।

कूक न मारु कोइलिया, करि करि तेह ।
लागि जात विरहिनि के, दुबरी देह ॥ ६ ॥

सवैया ।

कैलिया तेरी कुठार सी वानि लगे पर कौन को धीरज रैहै । याते मैं तोसों करौं बिनती कवि वोधा तुही फिरि कै पछितैहै ॥ स्वारथ औ परमारथ को गथ तेरे कछू सुनु हाथ न ऐहै । ठौर कुठौर वियोगिनि के कहूं दूवरी देहन मैं लगि जैहै ॥ ७ ॥

वैठि रसालन के वन मैं अधराति कहूं रन सों ललकारति । नाहक वैर परी बिरहीन के कूक वियोग के लूकन जारति ॥ वोधा अनेक कियो विनती रति को न कछू करुना उर धा-

रति। बाल रमै मधु मास छकी यह कोलिया पापिनि पीसई डारति ॥ ८ ॥

लखि नीर बहै औ दवागि दहै जमराज गहै कबहूं निबहै। पुनि सेर लथेरे बिकूके उसे बहु-तेरे बिथा पुनि और सहैं॥ कवि बोधा अनोखी कि साया लखो टुइ टूक ह्वै फेरि न धीर गहैं। तिरछी तरवारि लौं हैं तिरछे दृग लागे जिन्है ते लगे न रहैं ॥ ९ ॥

निसि वासर नींद औ भूख नहीं जब ते हिय मे यह आनि बसी। मिलतै न बनै जग की भय ते बरजी न रहै हिय की हुलसी ॥ कवि बोधा सुनै हे सुभान हितू उर अन्तर प्रेम की गांस गसी । तिनको कल कैसे परै निरदै जिनको है कुसाँगरे आँखि कसी ॥ १० ॥

बात नहीं समुभावै सबै यह पीर हमार न जानत कोई। का करै लैकै सिखापन को जिय जाहि को आपने हाथ न होई ॥ बोधा कदा-चित जानै वहै वहि के जिय में जिन बेदन

वोई । जाते मिटै यह पीर सरीर को है वह मूरि सजीवनि सोई ॥ ११ ॥

दूरि है मूरि अपूरब सो ससि सूरजहू कबहूं न निहारी । आदर बेली नवेली अबै काहु कैसे मिलै वर जोग दिवारी ॥ वोधा सुनै है सुभान हितू करि कोटि उपाइ थकै उपचारी । पीर हमारी दिलन्दर की हम जानत हैं वह जानन-हारी ॥ १२ ॥

कारी घटा दिसि दच्छिन देखि भयो सु चहै हियरा जरि कारो । ताही घरी घहराइ वही गिरि गो भुव पै लगि प्रेम तमारो ॥ केतन आइ लगाइ थको कवि वोधा हकीमन को उपचारो। पै न धरै वह धीर अली न मिलै वह पीर के जाननहारो ॥ १३ ॥

काहू सों का कहिवो सुनिवो कवि वोधा कहै मे कहा गुन पावत । जोई है सोई है नेकी वदी मुख से निकसै उपहांस बढ़ावत॥ याही ते काहू जनैये नहीं लहकै दिल को ना रहो फिरि

आवत । जीरन जामा की पीर हकीम जी जानत है मन की मनभावत ॥ १४ ॥

बोधा सुभान हितू सों कही या दिलन्दर की को सही करि मानत । ता मृगनैनी की चाह चितौनि चुभी चित में चित सो पहिचानत ॥ तासों वियोग दई ने दयौ तौ कहौ अब कैसे मैं धीरज आनत । जानत हैं सबही समुझाइये भावती के गुन को नहि जानत ॥ १५ ॥

बोधा किसू सों कहा कहिये सो बिथा सुनि पूरि रहै अरगाइ कै । यातें भले मुख मौन धरैं उपचार करैं कहूं औसर पाइ कै ॥ ऐसो न कोऊ मिल्यो कबहूं जो कहै कछु रंच दया उर लाइ कै । आवतु है मुख लौं बढ़ि कै फिरि पीर रहै या सरीर समाइ कै ॥ १६ ॥

हम काहू के आवैं न काहू के जाँइ यों गाँउ हमारो है साखिन को । लगि जाइ कहूं तौ हनाहक है सहिबे परै या सुयो राखन को॥ कवि बोधा भले पर बैठि रहो न उपाउ करौ

जग माखन को । पुनि लागिये नाहक लाली रहैं अखत्यार कछू इन आंखिन को ॥ १७ ॥

खरी सासु घरी ना छमा करिहै निसिबासर त्रासनहीं मरवी । सदा भौंहैं चढ़ाये रहै ननदी यों जेठानी की तीखी सुनै जरवी ॥ कवि बोधा न संग तिहारो चहैं यह नाहक नेह फँदा परवी । बड़ी आंखै तिहारी लगैं ये लला लगिजैहैं कहूं तौ कहा करवी ॥ १८ ॥

घाटन बाटन हाटन मै घर बाहिरहू सुनि एक जुवानी। भूली कहूं की भ्रमी हौ कहूं तुम डोलती कैसी थकी थहरानी ॥ है जो लगी यह दिलन्दर मै कवि बोधा सु तौ न किसू पहिचानी । तेरे लिये सुनि बालम रे ये दरेरे कहैं सब लोग दिवानी ॥ १९ ॥

देव दुआरे निहारि खड़ी मृगनैनी करैं रवि की छवि छोटी । हाथ मैं मालती माल लिये चली भीतरै ताहि गोसांइ अँगोटी ॥ पाइन ते सिख लौं लखि कै कवि बोधा मजा बरनी यक

छोटी। भाल मैं रोरी की बेंदी लसी है सनी मै लसी मनो बीरबहूटी ॥ २० ॥

छुटि जांइगी चेत के नेत सबै जो कहूं मुरली अधरा धरिहै। मुसकाइ कै बोलै तौ बाट परै नखहू शिख लौं विष सों भरिहै ॥ कवि बोधा तिहारे सयान सबै सुतौ सूधेई हेरनि मैं हरिहै। तुम्हे भावते जानि मने को करै वह जादूगरी बजि कै करिहै ॥ २१ ॥

प्यारो हमारो प्रवासो भयौ तब तें जरिये बिरहानल तापन। येते मैं पावस की या निसा मै हियरो हहरै सुनि केकीकलापन ॥ चात्रिक येते करैं बिनती कवि बोधा छको अपनीय अलापन। तू अपने पिय को सुमिरैं सुमिरैं हम तेरी जुबान की दापन ॥ २२ ॥

पिय प्यारे की बानि पपीहै परी अधराति कुलाहल गावतु है। रजनेरी सुभान सों आयौ पढ़ै कहि दूसरो आँकु न आवतु है॥ कलकानि न बोधा हमारी लखै इन्है आपनोई सुख भा-

वतु है। लखि पायो उसे सदा जानि पस्यौ करि ताउ सो तो घन तावतु है॥ २३॥

नित गांउ के नेह कै देवता ध्याय मनाइ भली विधि पांउ परौं। तिनसों धुनि या बिनती विनवों निरसङ्क ह्वै भावतो अङ्क भरौं॥ यह चाव न वोधा सरो कवहूं यह पीर ते वीर दिवानो फिरौं। परवाह हमारी न जानै कछू मनु जाय लग्यो कहु कैसे करौं॥ २४॥

कोटिक देखि फिरौं छवि मैं पै न कोऊ छवै सम वा छवि जूझै। आँखिन देखी जो वात तिन्है विन आंखिन सो नो जुवां हय वूझै॥ वोधा सुभान को आनन छोड़ि न आनन मो मन आनि अरूझै। जैसे भये लखि सावन के अँधरे नर को सु हरो हरो सूझै॥ २५॥

फल चारि रहैं तिन आगे खरे भृकुटी परखैं चित चायन मै। जे ओर ढरैं डगरैं तिनको जिनको पठवैं तिन्है जायन मै॥ कवि वोधा सरोज रहै निसि वासर फूले सुभान सुभायन मै।

मन भृङ्ग अहै भहरात कहा बसु रे बसु गोरी के पायन मै ॥ २६ ॥

अनतैं नित काह्न को होने न पाव समाग के लोग अयोगिया रे। दुख तेरो कहा सुनिहै दुखिया ह्वै रहै सब आपुहीं सोगिया रे ॥ करौं वारने तोपै बुधा बरही पुरहूत ते पूरन भोगिया रे। बसु रे बसु राधे के पायन मै मन जोगिया प्रेम वियोगिया रे ॥ २७ ॥

लोक को त्याग कियौ सबहीं प्रभु-पायन मै मन लागि रहा है । नींद अहार करैं न कछू दम खैंचतु आनन मौन गहा है ॥ मौत कहूं न कलेश कहूं कवि बोधा सनेह हिये उमहा है । ऊधोजू और सिखावने को सुनो जोग मै बीच रहोऽब कहा है ॥ २८ ॥

सुख मूल गये दुख मूल लये पुनि पाप रु पुण्य छुड़ाइ दई । कवौं काम ना क्रोध औ लोभ गहे समुझै सपने की बदी की ठई ॥ कविबोधा गही छवि सांवरे की उर मै यह प्रेम कि यारी

वई। तुम होउ सबै महरानी अबै हम तौ अब राम दिवानी भई॥ २९॥

बरवै।

कुचन बीच मनु उरभो, सकै न छोरि।
रघवा लै चित अँटको, सँकरी खोरि॥ ३०॥
जिहि गिरवर कर धारिसि, तारसि गीध।
तेहि चरनन कवि बोधा, मो मनु बीध॥३१॥
सहजे कुवरिहि दीन्यो, जो फल चार।
सोई नाथ निवाही, लगन हमार॥ ३२॥

सवैया।

ऊँचे अँटा औ अटारी सबै बसि याही बिना जनु आह धुवां की। बाग तमासो दवागि लगी सुरतै भई साल सबै बिछुवा की॥ एरी सखी अब बूझिये कौन सों कोऊ न चाहक है बँधुवा की। क्या ह्वै गयो राम सु कौन गली मिलो ताल के घाट न बाट कुवाँ की॥ ३३॥

लखि बेनी जटा न बिभूति मलै सिर गंग नहीं श्रमबुन्द चुये। ससि होइ न भाल त्रिपुण्ड

लसै उर हार न व्याल लखै भकुये ॥ बिन काजहि बोधा लराई करै पहिचानै न बावरे अन्ध भये ॥ अरे जोगिनी प्रेमबियोगिनी हैं हम होंहि न शंभु मनोज मुये ॥ ३४ ॥

मनमोहन ऐसो मिलावत हैं जो फँदै तौ कुरंग फँदैती करै । तबलौं छल जानौ न जात कछू जबलौं अधमी वह मारि धरै ॥ कविबोधा छुटै सुख स्वाद सबै बिन काज हनाहक जीव जरै । विष खाइ मरै कै गिरै गिरि तें दगादार ते यारी कभी न करै ॥ ३५ ॥

निसिबासर घाटन बाटन मैं हवा हाटन देखि सिरावै हियो । बतराते कहूं बसराते कहूं रँगराते मतै मत और पियो ॥ अस जो न कहूं सपने हौं लख्यौ सुतौ प्रेम की बाज़ी मैं जीति लियो । मजेदार सबै जग खेलिबो है कविबोधा बताइ कै प्यार कियौ ॥ ३६ ॥

पहिचानै नहीं घर बाहर को या हकीकति कोई दिनौ की ठई । अपने सुख आगे सुरेसहुं

को तिनुका समये उर आने हई ॥ कवि बोधा तमासो अजूवा लख्यौ कुलकानि गली सब भूलि गई। ब्रजराज को चाहि कै आखिर या बिनही मत ये मतवारी भई ॥ ३७ ॥

हिय आने के यों दिल मात नहीं जब लौं नहीं आन कै जाइ रहै। मनमें गुनि आवै कहि ना वनै निसि वासर ता उतपात रहै ॥ कवि वोधा न आन के जाइबे को यह प्रेम को पन्थ जवाहिर है । दिलमाहिर ताको मिलै बिछुरे या किसा ते सोई दिलमाहिर है ॥ ३८ ॥

दुख औ सुख पाप औ पुन्य दुऔ रसरासु को रोवत गावतु है । गुन औगुन नेकी बदी हितू वैरि सुधा विष एक सु भावतु है ॥ कवि वोधा अनादर आदर ऊपर तै जिय तौ सुख पावत है। दिलदार पै जौलौं न भेंट भई तब लौं तरिवो का कहावतु है ॥ ३९ ॥

ऐसीय नाथ घरी वह कौन वजाइ के बाँसुरी मोहनही हरौं । तादिन ते हौं जकी सी

थकी चकचौंधी फिरौं नहि धीरजही धरौं ॥ बोधा न मीत सो प्रीत सखी करि लाज निगोड़िनि बन्धन जो अरौं। प्रेम ते नेम कहा निबहै अब तो यह नेह निबाहिबेही परौं ॥४०॥

छाड़ि सखीन की सीख सबै कुलकानि निगोड़ी बहाइबेही है। ह्वैकै लटू लपटाइ हिये हरि हाथ ते बंसी छुटाइबेही है ॥ बोधा जरैलुन के उपहास अँगेजु कै कुंजनि जाइबेही है। लाज सो काज कहा बनिहै ब्रजराज सों काज बनाइबेही है ॥ ४१ ॥

इति द्वितीयोऽध्यायः।

---

अथ त्रितीयोध्याय—सवैया।

कबहूं मिलिबो कबहूं मिलवो यह धीरजही मै धरैबो करै। उर ते कढ़ि आवै गरै ते फिरै मन की मनहीं मै सिरैबो करै ॥ कवि बोधा न चाउ सरी कबहूं नितहीं हरवा सो हिरैबो करै। सहतेही बनै कहते न बनै मनहीं मन पीर पिरैबो करै ॥ १ ॥

दहिये विरहानल दाहन सों निज पापन तापन को सहिये । चहिये सुख तौलौं रहै दुख कै दृग वारियै बोधन कै चहिये ॥ कबि बोधा इतै पै हितू न मिलै मन की मनही मै पचै रहिये । गहिये मुख मौन भई सो भई अपनी करि काहू सों का कहिये ॥ २ ॥

बोधा सुभान हितू सों कही वै भिराव के गार ते फेरि भिरै ना । फेरि न फूली नेवारी उतै उन बेलिन सों फिरि कै अभिरैना ॥ फेरि न वैसी भई अरती कबहूं वह बाम मै फेरि थिरै ना । खोरिन खेलिबो संग सखीन के वै दिन भावती फेरि फिरै ना ॥ ३ ॥

जब ते ब्रजराज को रूप लख्यो तब ते उर और न आनतु है । निसि वासर संग रहै उनके हमको धौं कबै पहिचानतु है ॥ कवि बोधा भयो अलमस्त महा कहूं काहू की सीख न मानतु है । तुम ऐसहीं मोहि लटी करती मन मेरो कही नहि मानतु है ॥ ४ ॥

फुटका अरु फेनी जलेबी दई बरफीन को स्वादऊ जानत ना। लडुआ मिसिरी अरु पेर दये हेवा हाटन की पहिचानत ना॥ कविबोध कहैं उनहीं लै चलै सिख काहू कि कौनहूं मानत ना। बस मेरो कछू ना हुतो मन मे बि देखे तुम्है मनु मानत ना॥ ५॥

मुख बोलै न हेरै हसै न लसै ना धसै द वाजि बसै पलहूं। रजा तेरी सुभान सुभान तु यौं कहै न कहै कछू भीख चहूं। उर याके लग सुन कोऊ लखै कहने को नहीं सहने वरहूं मन जोगिया प्रेमवियोग परे भँवरी दै फिरै थिरै कबहूं॥ ६॥

तैं मत ऐसी धरे चित मै जग तोहि विवेकी गनै बरहा सर। लोक चतुर्दश को करता क तेरे रहै उतपात औ नासर॥ बोधा सनेहै बिना जे बिते दुखहू सुख ते बसु जा मन रा सर। लिखिहीं लेत अरे निरदै विधि जीवन मैं तैं वियोग के बासर॥ ७॥

मुख चारि भुजा पुनि चारि सुने हद बाँधत वेद पुरानन की। तिनकी कछू रीति कही न परै यह रूप औ कोकिल तानन की॥ कवि बोधा सुजान वियोग कियो छवि खोइ कलानिधि आनन की। हम तौ तबहीं पहिचानि गई चतुराई सबै चतुरानन की॥ ८॥

दोहा।

प्रेम कोठरी कुलुफ लख, बोधा कठिन अपार।
रची जुलुफ महबूब की, रुचिर कंचुकी तार॥

बरवै।

मुकुति दीन फल असुरन, छमि अपराध।
रे मनु भजु तिहि प्रभु कहँ, तजि बकबाध॥

इति तृतीयोऽध्यायः।

---

अथ चतुर्थोऽध्याय—सवैया।

ब्याउर कै उर की परपीर कों बाँझसमाज मे जानत को है। पाहन पोत तरी सरिता कहिये बिसवास तौ मानत को है॥ पिराड मैं

बोधा ब्रह्माण्ड लिख्यौ हग देखे बिना पहिचानत को है। जाके लगी दिल जानत नाहि को जान पराये की जानत को है ॥ १ ॥

बरवै।

लखै पराये चित को, दुख सुख बीर।
अस अजमति नहि देखी, काहू तीर ॥ २ ॥

सवैया।

त्याग को जोग जहान कहै हम तौ तबहीं चुकी त्यागि जहानै। मौत कलेस को लेस नहीं कवि बोधा गोपाल मै चित्त समानै ॥ खैंचती पौन को मौन गहे अरु नींद अहार नहीं उर आनै। ऊधो जू जोग की रीति कहो हम जोग ना दूजो वियोग ते जानै ॥ ३ ॥

ह्यां तौ नजीकी भयौ उधवा कवि बोधा लहै सो महादुखदायक। ह्यां हनुमान नजीकी रहैं कर जोरे भुवै परखैं खलघायक॥ ए ब्रजराज मिले हमको जिनके न कहूं करुना उर भायक। जानिये राम गरीबनेवाज सिया धनि जाके पिया रघुनायक ॥ ४ ॥

नेह तज्यौ घर सों बर सों बरहू बटपार के हाथ विकाने । त्यागि तिन्हैं तिनुका करि कूबरी हाथ लै आधिक राति पराने ॥ काहू सों को अनकूल जहान मैं सो जस बोधा कहां न बखानै । ऊधो जू यामै कळू सक ना हम आकिलही ते खुदा पहिचानै ॥ ५ ॥

हा हम सों वलि कौल करौ कहती हमै नाहिनै संक धका की । या घर ते कबहूं न काढ़ौ कवि वोधा धरौ घर भीत तका की ॥ खेलौ तौ खेलौ खुसी सों लली जो न खेलौ तौ छोड़ौ य रीति वक्का की । दो दो अनोखियैं कैसे सधै दूतै आसिकी ये उतै कानि कका की ॥ ६ ॥

वैर परी पुरवासिनी ये सबै जाम करैं घुघुरून घना को । वीच परी टटिया तिनको झझकोरत जोर धरे जोवना को ॥ बोधा बचै ना घरी पल मै छुटि जाइगो छोर छुये ते फना को। सो सुकै काहू सो का कहिये हमै सो सुन और यों रासु जना को ॥ ७ ॥

बरवै।

अरति आइ बरिआई, खात न चाउ।
बरि बरि उठति परोसिनि, करि बरिआउ॥

छन्द।

महिरमजान माल हम बेचो नेह नफा ठहराइ। सो आसिक को देन न भावै मजा न दिल की पाइ॥ फिरै माल कीमति घटि जावै त्यागै कथा रहाइ। कठिन पीर कहिबे की नाहीं सहिबेही बनि आइ॥ ९॥

कसक लगी जाके हिय मैं ताही हिय मैं कसकी री। सहर तमासा देखत सबहीं तिन को होत हँसी री॥ प्रसुत पीर बन्ध्या का जानै भालकान पहिरी पोरी। दिल जानै कै दिलवर जानै दिल की दरद लगी री॥ १०॥

सवैया।

गहि पाइ ते भीलनी हाथ करौं तू तहां न गुसा उर आनतु है। बनियै घर बोधा बिके गुर को तिनपै रिस काहे न ठानतु है॥ हिय फाटो

तू मेरी जोवान सुने उन ते घटि कामै बखानतु है। हँसि कै तव ज्वाव दियो मुकुता वै अजान तैं जौहरी जानतु है ॥ ११ ॥

निसि वासर द्वार खरेई रहैं जब लौं अपने घर वात लही । पुनि टारिहु ते न टरैं कबहूं वरहूं रहिवो यह टेक गही ॥ कवि वोधा रती के गिरे कवहूं तिन सो न कछू पहिचान रही । समयौ परि कौन के कौन गये अरे आय कै ऐसी न को न कही ॥ १२ ॥

लखि चीकने पातन पेंड़ वड़ो रहै फूलन सों छवि छाइ सवे । तकि ऐसो सुवास सुवा विल सो पलिवे की तहां सचु पाइ सवै ॥ कवि वोधा भुवान फँसो फल मै पछिताइ विदा य हि मांगि अवे । सठ सेमर ने यह ज्वाव दयो हम सों तुम सों पहिचान कवै ॥ १३ ॥

चाम के दाम गुनीन के आम यों विस्वा को प्रीति पलीत को मेवा। सेनापती सपने मे सती अरू भानुमती करैं पांख परेवा ॥ वोधा जुवान

जथा सठ की लखो फागु को बापु देवारी को देवा। आखिरो चूमि कै कौन गयो करि धूम की धाम लौं सूम की सेवा ॥ १४ ॥

तरु कुन्दल खिमच कुन्द बड़े कचनार कनैर अनारकली। गुल बीसक गेंदे पचास लखी तिनह्नू न कही यक बात अली ॥ गुन गाय कै बोधा रिझाय फिरो पै न काह्नू को रीझि कै ग्रीव हली। चलु री भँवरी चलिये यह बाग दवाग लगै तो बहैगी गली ॥ १५ ॥

सेवती जासो जुही कचनार अनार करील कनैर निहारी। पांड़र मौर शिरी मचकुन्द कदम्ब लौं बोधा लखी फुलवारी ॥ केतकी केवरो कुन्द नेवारि सो देखि लता यह चाड़ निवारी। मालती एक बिना भ्रमरी इतै कोऊ न जानत पीर हमारी ॥ १६ ॥

कै दिलजाहिर सों बिछुरो कै बिवाद गह्यो उर सील पिरानो। कै कहूं बाजा सों बीच परो सुत सोगु किधौं भट को भहरानो ॥ बोधा दसा

अपनी कहु भृङ्ग किधौं कछू गाँठि तैं भाल हिरानो । रोवत संग लिये भ्रमरी तू भयो कहु कौन के सोच दिवानो ॥ १७ ॥

वरवै ।

लीने संग भ्रमरिऐ, भरिस वियोग ।
रोवत फिरत भँवरवा, करिकै सोग ॥ १८ ॥

सवैया ।

फुलवारी विषे फल फूलन मै लखि लोनी लता तिन सो अटको । वरसै रसकेलि न संककारी कबहूं तहँ दूसरो ना खटको ॥ कवि बोधा तहां तरु चम्पक को सु अचानकहीं लखि कै लटको । बिछुरी मुहि मालती प्रानपिया तिहि पीर फकीर भयो भटको ॥ १९ ॥

विन स्वाद पुरानी लता सिगरी तिनहूं मै कछू गुन ज्ञान नतो । लखि केतकी और नेवारी जुही मनमानै न सेवती वीच रतो ॥ कवि बोधा न प्रापति आदर को दरकार करो करि येक मतो । यहि आसरे या वगिया विलम्यौ वा चमेली नवेली सो नेह हतो ॥ २० ॥

रति को ना नेवारी नेवारी व्यथा मन मारी नहीं मन क्यों मथिये। कवि बोधा कहीं हँसि सेवती ने यह प्रीति अनोखी मे न नथिये॥ तिनहूं ते न चाउ सरो भ्रमरी तौ करील पै कौन कथा कथिये। घटि चेत गयो सुनि केतकी को का गरीब बेसाह करै हथिये॥ २१॥

किसा सेवती सोनजुही सों कही इन्है देखि दया मनमै न जगी। पुनि पूछी न कोऊ विथा इनकी पै न एकऊ वाके हिये मे खगी॥ सँग भौंरी लिये रंगहीन फिरै उर पूरी वियोग दवाग जगी। कछू मालती के बिछुरे तब ते भ्रमरै भहिरेवे की बाय लगी॥ २२॥

भट भेर फिरो सिगरो बसुधा सुविसेखि लखो सब एक रुखी। जित बाल तितै खुसी हाल सबै जित बाल नहीं तित हाल दुखी॥ तब तौ रति चाह न दूजी रहै कविबोधा सोहात ओही सुरुखी। दुख ठौर सबै विधि और रचे सुख ठौर अकेली सरोजमुखी॥ २३॥

कहि वेदनहूं औ पुराननहूं नर लोगनहूं चलि वूझी जिसी। जिन तौ हमै सीख सिखाई यहै वनहू घर आपने सीख तिसी ॥ पुनि आप तै वोधा विचारत सो निरधारी भले मति कै पिरसी। मृगनैनी विलासनी ते कवहूं सुख और सुने हम ठौर मिसी ॥ २४ ॥

चाँदनी सेज जराय जरी गदिया अरु गेडुआ देखि रिसाती। रातौ हरी पियरी लगी झालरैं केशरिवारी विरी नहीं खाती ॥ वोधा इते सुख मै न रमै उतै चाहि कै साँवरो रूप सिहाती । यार के साथ पयार विछाइ कै डेलन मै परि खेलन जाती ॥ २५ ॥

प्रेम की पाती प्रतीति कुँडी दृढ़ताई के घोटन घोटि वनावै। मैन मजीजन सों रगरै चित चाह को पानी घनो सरसावै ॥ वोधा कटाच्छन की मिरचैं दिल साफी सनेह कटोरे हिलावै। मो दिल होइ खुसी तवहीं जव रंग मै भावती भंग पिआवै ॥ २६ ॥

काँपत गात सकात बतात है साँकरी खोरि निसा अँधियारी। पातहू के खरके छरकै धरकै उर लाय रहै सुकुमारी ॥ बीच मै बोधा रचे रसरीति मनो जग जीति चुक्यौ तिहि बारी। यौं दुरि केलि करै जग मै नर धन्य वहै धनि है वह नारी ॥ २७ ॥

तुम और को आदर का करिहौ निज पातन सो हियरो न हिलो। पुनि नाहिन छाह दिगम्बर सों फल स्वाद विहीन न जात गिलो॥ इत जानतो तोहि तो आवतो ना हिय जानि इहां टुक एक भिलो। मति होते करील मधो ही परयो या चमेली नवेली के धोखे मिलो ॥

इति श्रीइश्कनामा बिरहीसुभानदम्पतिबिलास चतुर्थोध्याय।

---

अथ पञ्चमोऽध्याय — सवैया।

पच्छिन को बिरछो हैं घने बिरछान को पच्छियो हैं बड़े चाहक। मोरन को हैं पहार घने औ पहारन मोर रहैं मिलि नाहक ॥ बोधा म-

द्वीपन को मुकुता औ घने मुकुतानि के होंहि बेसाहक । जो धनु है तौ गुनी बहुतै अरु जो गुन है तौ अनेक हैं गाहक ॥ १ ॥

वटपारन बैठि रसालन मै यह कौलिया जाढ़ु खरे ररि है । बन फूलि है पुञ्ज पलासन के तिनको लखि धीरज को धरिहै ॥ कवि बोधा मनोज के ओजनि सों विरही-तन तूल भयो जरिहै । घर कन्त नहीं विरतन्त भटू अब कैधौं बसन्त कहा करिहै ॥ २ ॥

है न मुसक्किल एक रती नरसिंह के सीस पै सांग उबाहिबो । दैबे को कोटिन दान अ-नेक महेश लौं जोग हिये अवगाहिबो ॥ बोधा मुसक्किल सोऊ नहीं जो सती ह्वै सँभारै सखीन को दाहिबो । एकहि ठौर अनेक मुसक्किल यारी कै प्यारी सों प्रीति निबाहिबो ॥ ३ ॥

दोहा ।

सलिल बाहिबो सिंह सिर बोधा कवि किरवान।
प्रीति रीति निरवाहिबो महिर मुसक्किल जान॥

सवैया ।

हार मैं प्यारो खरो कब को लखु तौ हियरे सों लगाइ न लीजै । तू तौ सयानी अनोखी करी अब फेरि कै ऐसी न चित्त धरीजै॥ बोधा सोहाग औ सोभा सबै उड़िजैबे के पन्थ पै पाँउ न दीजै। मानि ले मेरी कही तू लली अहै नाह के नेह मथाह न कीजै॥ ५ ॥

इति श्रीबोधाकविकृत इश्कनामा पंचमोऽध्याय समाप्तः ।



# ॥ शृङ्गारसतसई ॥

भवानीदासात्मज कवि रामसहायदासजी कृत ।

जिसे यह ग्रन्थ लेना हो वह भारतजीवन
सम्पादक बाबू रामकृष्ण वर्म्मा बनारस
को पत्र लिखें जिन्होंने रसिकजनों
के निमित्त निज व्यय से छापकर
इसे प्रकाशित किया ।


## काशी ।

भारतजीवन यन्त्रालय में मुद्रित हुई ।

संवत् १९५३ ।

प्रथम बार १००० ] [ मूल्य ।)

# भूमिका।

इस प्राचीन ग्रन्थ को हमने पटनानिवासी सिक्खों के परमपूज्य गुरु श्रीमहन्त बाबा सुमेर-सिंह साहब जी से पाया जिनके द्वारा सम्वत् १८९२ की हस्तलिखित कापी हमे प्राप्त हुई। उक्त महन्तजी साहब कविता के बड़े प्रेमी और ज्ञाता हैं, काव्य में इन का नाम सुमेर या सुमरेश पाया जाता है। कवि रामसहायदासजी का जीवनवृत्तान्त हमें अभी तक कुछ नहीं मिला है नहीं तो हम सहर्ष उसे प्रकाश करते। ग्रन्थकार ने इसका नाम "रामसतसई" रक्खा था किन्तु उसमें भ्रान्ति होती थी अतएव इसका नाम बदल कर "शृङ्गारसतसई" रक्खा गया। हम फिर भी उक्त महन्तजी साहब को ऐसे ग्रन्थ को प्रकाश करा देने के लिये अनेक धन्यवाद देते हैं।

रामकृष्णवर्म्मा
सम्पादक भारतजीवन
बनारस।

# अथ शृङ्गारसतसई

## रामसहायजी कृत ।

दोहा ।

श्रीस्यामा कों करत हैं रामसहाय प्रनाम ।
जिन अहिपतिधर कों कियौ सरस निरन्तर धाम॥
अरुन अयन संगीत तन बृन्दावन हित जासु।
नगधर कमला सकत बर बिपुंगवासन आसु॥२॥
अवलि अली लै ब्रजगली रली करौजे आय ।
ते राधा माधव हरैं बाधा रामसहाय ॥ ३ ॥
झूमहिं झुमके स्याम के अली भली छबि जोइ।
मनहु झकोरे खात हैं कामहिंडोरे दोइ ॥ ४ ॥
मृदु धुनि करि मुरली पगी खगी रहै हरिगात।
या मुरली की है अली बनी भली विधि बात॥
धन जोबन चय चातुरी सुन्दरता मृदु बोल ।
मनमोहन-नेहै बिना सब खेहै के मोल ॥ ६ ॥
कत मुकुरो लाज न धरो यह छबीहि पी पाय ।
उरलखि अलिक अधर लखो प्रतिबिम्बौहिमगाय॥

मन मलिनाई परिहरैं सुनि मेरो सिख बानि ।
पिय की जीवनमूरि है तिय तेरी मुसक्यानि॥८॥
धीर धरो सोच न करो मोद भरो जदुराय ।
सुदति सँदेसे सुनि रही अधरनि मैं मुसुक्याय ॥
छाय रही सखि विरह सौं वे-आवी तन छाम ।
पी आये लखि वरि उठी महतावी सी बाम ॥
त्रिवलि-निसेनी चढ़ि चल्यौ लेन सुधा मुसुक्यानि।
उचके कुच उचकै अरी उचकै चितहि विचानि॥
लावति वीर पटीर घसि ज्यौं ज्यौं सीरे नीर ।
त्यौं त्यौं ज्वाल जगै दई या मृदुवाल सरीर॥१२॥
तब अली न तोसौं कही प्रीति की रीति भली न ।
अवमलीनचितक्तिकिये चितवतिचकितगलीन॥
विषधर-स्वास सरिस लगै तन सीतल वन-बात।
अनलहु सौं सरसै दगै हिमकर-कर घन-गात ॥
फूल विमूलैं देहि री हो हूलैं अलि अन्ध ।
तन मन रन्ध करैं पवन सीतलमन्द सुगन्ध॥१५॥
विहसिन आई नीर कौं वीर तरनिजा तीर ।
चीर गिरी तिहि हेरि री पहिराई बलवीर॥१६॥

प्रथमहि पारद मैं रही फिरि सौदामिनि माह ।
तरलाई भामिनि-दृगनि अब आई ब्रजनाह॥१७॥
बकुलनिकुंज हरि न मिले हरिन भयो मुख ऐन ।
चकित चितौति खरी किये डरे हरिन से नैन ॥
पहिरा री वे हूनरी सुरँग चूनरी ल्याय ।
पहिरै सारी सौसनी कारी देह दिखाय ॥ १९॥
अजब बनक औरै बनी मनमोहन की नारि ।
बलि तिहि छनक निहारि ले घूंघटतनकउघारि॥
जमुनातट नटनागरै निरखि रही ललचाइ ।
बारबार भरि गागरै बारि ढारि मुसुक्याइ॥२१॥
घन घहराय घरी घरी जब करिहैं झर नीर ।
चहुंदिसि चमकै चंचला कस बचिहै बलबीर॥२२॥
को कबलौं सिख देय जू सैन नारँगी लाल ।
नवल कुचहि दलिजात हो यह अनारपन लाल॥
रुचिराई चितवनि निकनि चलनि चातुरीचारु।
हित चितकी रुचि चुनिदई सुनि तोही करतारु॥
ललन लसन की अरुनई जुरि अधरन मैं आइ ।
कामिनि के तन की दमक दामिनि मैं दरसाइ॥

बढ़ि बढ़ि मुख समतालिये चढ़िआयो निरसंक ।
तातें रंक मयंक री पायो अंक कलंक ॥ २९ ॥
इन्दुमुखी तो गुनलिखत अधरलग्यौ मसिबिंदु ।
जौं गुनहीं छमिहो लगै जौं गुनहीन न निंदु ॥
भादौं गरू मरू गयो आयो सरद हरी न ।
अवडर मार सुमार री जनम भयौ कानीन ॥
कोरिजतन करिर थकी सुधिहि सकी न सँभारि ।
छाक कयल छवि की छकी जकीरही यह नारि ॥
कत सौंहैं करि हैठ तकि तकि न जेठ की धूप ।
यह सौंहैं चारी करै देह कँटारी रूप ॥ ३० ॥
वस की इन अँखियांनि कौं नवनारी मग जात ।
हँसि कै दस गारी दई सुनि रस की इक बात ॥
ललनचलनसुनिमहिगिरी मुख कफ री लखि भीर ।
तरफराति है राति तें मनु सफरी बिन नीर ॥
ऐसे बड़े बिहार सौं भागनि बचि बचि जाय ।
सोभाही के भारसौं बलिकटि लचि लचि जाय ॥
तुमहिं सुधासानी कहो बानी रस सरसात ।
करि यारी हरिसौं न करि करियारी सी बात ॥

लखि रमनीकों अनमनी सोखधनी कों दीन ।
गौनो रह्यौ विदेस जौ तौ गौनो क्यौं कौन ॥
कमलावर करकमललखि कमलगयौ कुँभिलाय।
कमलनि कमलभरे रही कमलौ लौं चकवाय॥
हो हरि गोरी खेलते होरी रह्यौ न धीर ।
संगहिँ अँखियनि में धसे अलि बलबीर अबीर ॥
त्रिन तनयाहि कुवननदै निति अतिदारुनसास।
पठवति मोहि अकेलिये दुपहर चुनन कपास ॥
लोललोचनी करठलखि संख समुद के सोत ।
अरु उड़ि कानन कों गये केकी गोल कपोत ॥
निपट कसनिकटिकाछनी अंसनिलसनि सुबास।
मृदु बिहँसनि हेरनि हरी अरी करी हगबास ॥
सजनीविसद जलदगरल नभनिरमल दुखफंद।
पावक सी रजनी लगै नावक सर कर चंद ॥
सिर धारी सारी हरी हरि गिरिधारी होइ ।
खरे धरे गिरिये कहोंपरे धरे गिरि दोइ ॥४२॥
चली कामिनी जामिनी भेटन नंदकिसोर ।
झुकै चकोर सुचाँदनी जानि दामिनी मोर ॥

सदन निकट के ताल मैं बंसी बाजी लाल ।
सुनत नवेली ह्वै परी तलबेली नटसाल ॥ ४४ ॥
मन उलहै दुलहै लखन चपन सकुच रहिजाय।
झाँकि झरोखे कामिनी दामिनीव दुरि जाय ॥
सुघर वदन के अधर सद रदन सुछद छविछाज।
मदन कदन कर सदन ते मनु आयौ द्विजराज॥
इक दरसावे आरसी इक सुरझावे बार ।
बीचे चष नीचे किये चितवत नन्दकुमार ॥४७॥
उँजियारी में जो कढ़ै उँजियारी मिलि जाय ।
अरु अँधियारी राति में जाय उँज्यारी छाय॥४८॥
सटपटाति हारी भई कारी राति निहारि ।
वन तन कों चलि वलि गई सिति पट घूंघट टारि॥
तन मन वेधक हैं गनी रहहिँ तनी अति पैन ।
नहिँ तरुनी वरुनी घनी वनी अनी सर मैन ॥
मेरे दृग को दोस री लाइ लगावैं धाइ ।
बिन चितये चितचोर के भरि आवैं अकुलाइ ॥
हियतकिलनविहँसनलगी अव धन तनदिनमाँह।
भई लरिकाई तरुनई पूरव पर दल छाँह ॥५२॥

जान कही तौ जाइये कुसल रहौ हे कन्त ।
हौं बाचिहौं हिमन्त सौं सुख साचिहौ बसन्त ॥
धी उठिगी सुठि हठ-पगी किये अयान छमा न ।
अब पछतान कहा लगी कौ यह मान अमान ॥
नासी दामिनि की प्रभा सहजहि हँसी माह ।
वा नवला सी हेम की लवलासीहु न नाह ॥५५॥
घट ल्याई उठि पीतपट कसऽब दियौ ढरकाइ।
बिहँसिचलीचहि सासरुप चंचल चपनिचलाइ॥
बिधु बन्धुर मुख भा वड़ी बारिजनैन प्रभाति ।
भौंह तिरीछी छवि गड़ी रहति हिये दिनराति॥
हौं दृग वार जोरि रहौं याते जानत बाल ।
उहि नागरि जो भाल कौं लाल कियौ हे लाल॥
जऊ सौंह नख-खत भरे खरी ढिठाई खात ।
तऊ सलोनी की रहो भरी मिठाई बात ॥५९॥
भूलि रहे बलबीर घर बीर धरौं किमि धीर ।
जमुना तीर करीर तर हनत कुसुम सर तीर॥६०॥
चित चञ्चल जग कहत है सो मति सो ठहरै न।
या ठोढ़ीकी गाड़ गड़ि थिर ह्वै फिरि निकरै न॥

ए जीगन न उड़ाहिँ री बिरह जरोहि जराय ।
इत आरी मदनागिकी चिनगारी रहि छाय ॥
लखिलखतहिँमनहरिगयो जग्यो सुमनसर जोर ।
मूरति सी निरखति खरी सूरति नन्दकिसोर ॥
सजनी निपट अचेत है दगादगी समुझै न ।
चित वित परकर देत है लगालगी करि नैन ॥
तू सतुराई में दुरे दूरो जाय न त्यागि ।
पूस तुहिन को त्रास सों सूरो सेवत आगि॥६५॥
निधरक छवि छाके छकैं चलहिँ न अरु बिचलै न ।
ये लोचन अतिलालची वरजेहू मानै न ॥६६॥
छनविकुरनचितचैन नहिँ चलनचहत नँदलाल ।
अब लखिवी री होति है याको कौन हवाल ॥
धवल अटारी लखि खरी नवलवधू हरि दंग ।
सादी सारी सबनमी लसत गुलावी रंग ॥६८॥
या ठोढ़ी सरि कों जवै सफल भये वौराय ।
तवहिँ रसालनि कों गई कोइल दाग लगाय ॥
प्रीतम पौरि खरे रहे भरे सनेह निहारि ।
हरपी दौरि परोसिनी विलखी नागरि मारि ॥

लाल अचंचल चख खरे चितवत हैं चितलाइ।
बाल दृगंचल जल भरे अंचल दै मुसुक्याइ॥७१॥
बीर बधू ही पापिनी बीर बधू हरि लेहिँ।
और पी कहाँ जापिनी पीर पपीहा देहिँ॥७२॥
अँखियनिकीगतिलखिअरी बिषमजोलाइलगाइ॥
ज्यों २ ताहि बुझावती त्यों २ अति सरसाइ॥
काके पा गहि भा भली पागहि दीनी लाल।
को निगुनी गुन लै दई यह निगुनी नवमाल॥
दई बाम-तन छाम मैं काम कियौ यह काम।
भई माघ की चाँदनी यह निदाघ को घाम॥
जे हरि मोहन रूप सों कीन्ह्यौ मार सुमार।
ते हरि तूं मोहे अरी जेहरि की झनकार॥७६॥
झीनी सारी कांचुकी कुच रुचि दीसी आज।
जनु बिबि सीसी सेत मैं केसरि पीसी राज॥७७॥
मोसों क्यौं न कहै हहा मैन हनै सर पै न।
राजिवनैन बसे कहा नहिँ आये रँग ऐन॥७८॥
जमुनातट घट भरि चली अधरनि मैं मुसुकाय।
चितवनि सों यक सुधि लई दई कई ही घाय॥

सखिकपोलउरलालकै लखि हँसि बाललिलार।
दीनी बेंदी लाल लै बाल समी आकार ॥८०॥
अधर मधुरता लेन कों जात रह्यौ ललचाइ।
हा लोटन मैं मन गिर्यौ उरजन चोटन खाइ॥
नैननि मढ़ि चितचढ़िरही वह स्यामा वह साँझ।
झलकी दै ओझल भई झाँकि झरोखे माँझ॥८२॥
अरी होन दै अब हँसी लहरि भरी हौं जोइ।
हौं वा कारे की डसी तीतो मीठो होइ॥८३॥
पी आवन की को कहै सावन मास अँदेस।
पातीहू आती न ती अरु पाती न सँदेस ॥८४॥
चित चिहुँटै मग पाय गो डहडहाय तन वार।
मन खुसिहाली लहलहै लखि साली घनहार॥
भोरहि उठि आये ललन कल न परी निसि सैन।
मेरे अनुरागनि रँगे तरुन अरुन ये नैन ॥८६॥
सेज चमेली की रचै वासै वास सुवास।
धन तन गन भूषन भरै मनमैं भरी हुलास॥८७॥
लखि नवला की वर प्रभा नहिँ चपला ठहराय
फाटत सी करहाट को हाटक हाट विकाय ॥

मोती झालर झलझलैं झीने घूंघट माह ।
मनु तारागन झलमलैं सरवर अमलअथाह॥८६॥
कित चित गोरी जौ भयौ जष रहरि को नास।
अजहूं अरी हरी हरी जहँ तहँ खरी कपास॥८०॥
निज घट उठवाती अरी सो देती न उठाय ।
आन कका के माथ की साथ न जाउँ लवाय॥
तेरी चेरी चंचला केसरि हेसरि नाहिँ।
कंचन रुचि रञ्जन लहैं चम्पक चपि छपिजाहिँ॥
हँसि आवै हँसि जाय है कसि अँगिये अँगिराय
भौंहनि कौं सतराय कै अँखियनि सौं बतराय॥
स्यामरूप स्यामा किये बिहरि रही सखि संग ।
हरि आये पट कपट गो उघरि लपटि रहि अंग
यौं तमोल की सुरँग दुति राजति दसननिमाह।
जनु जागति मुकुतानि मैं अरुन मनिनकी छाँह॥
मन नितंब पर गासरू तरफरात परि लंक ।
बर बेनी नागिनि हन्यौ खर बीछी को डंक॥८६॥
आये हैं मनुहारि हित धारि अपूर बहार ।
लखि जीके नीके सुखद ये पीके ज्यौनार ॥८७॥

गहति हाथ लखिलहतिनहिँ लंक सलोनी नीठि।
सुछवि उदधि अवगाहमैं लसति लहरि सी ईठि॥
वसन हरत वस नहिँ चल्यौ पिय बतरसबस आय।
अँगनचिलक तियनगन की लीनी लाज बचाय॥
सब घन नीचे दामिनी नचत लखैं खग बाम।
हों घन ऊपर दामिनी नचत लखी इक जाम॥
अहे दीनता सों रहे विनय बैन कों भाषि।
मानि कहो मो मान तजि कान मानकों राखि॥
आधे नख कर आँगुरी मेंहदी ललित बिराजि।
मनु गुलाबकोंपाँखुरी बीरवधू रहिँ छाजि॥१०२॥
ठठकिचलनिकटिकोलचनिचषनिनचनिसकुचानि
सो चित वा रुचिको रचनि रुचिररचीनितजानि
चलिगो कुंकुम गात तें दलिगो नयो निचोल।
दुरै दुराये क्यों सुरत मुरत जुरत चषचोल॥१०४॥
क्यों न एक मन होत तन दोय प्रान इक बार।
ये नीको रिझवारि है वे नीके रिझवार॥१०५॥
हारी जतन हजार कै नैना मानहिँ नाहिँ।
मावव रूप विलोकि री माधव लों मेंड़राहिँ॥

दिन बिहाय गृहकाज में सजनी सदन न सास।
नाह खाय छन लहति हौं रजनी मांह सुपास॥
निरखि कलाधर की कला कनककलस पर बीर।
नाथनाथ के माथ पै भूलि कहैं कबिधीर॥१०८॥
नँदनन्दन मन लै गये निज संगै यह पेषि ।
चन्दन चन्द न हौ हरैं भ्रन तन ताप बिशेषि १०९
सरद जामिनी कुंज कों लिये चले यदुराय ।
मिली कामिनी चाँदनी केसनि दई बताय ॥
बजनी पँजनी पायलौ मनभजनी पुर बाम ।
रजनी नींद न परति है सजनी बिन घनस्याम॥
हिये सुधादीधितिकला सुमधु पिये हित नैन ।
भाल भौम बालहि लला धरि कीन्हो कित सैन॥
तादिन ते जकि सी रही थकि सी आठौजाम।
जादिन ते चित मैं चुभी चोखी चितवनिस्याम॥
समुझैबेही कहत हौ सहज समुझि जिय मान ।
रीति रँगै किमि प्रीति की लाल रँगे तियआन॥
होनहारु काया धरी यह गति आनि निहारु ।
बालबदन बारिज अरी मार्यौ बिरह निहारु ॥

चन्दमरीची सी अरी कोन खरी लखि आय ।
कसे कंचुकी तास की हास भरी अँगिराय॥११६॥
जोतव छनहुँ न सहि सक्यौ बिछुरन नन्दकिशोर।
सो हिय दरकत कत न अव भरे बिरह-मरु जोर॥
छार अँगारनि परत हैं मनु तजि बैर समूल।
माह सीत की भीत सों दहनौ ओढ़े तूल॥११८॥
आज अचानक मिलि गली चली गई वह हाय।
अधरनि मैं मुसुक्याय कै अँखियनि आँखि लगाय॥
कालि ससुरपुर कों गई सजनी नन्द पियारि ।
जमुना जाउँ अकेलिये रजनी आनन वारि॥१२०॥
एड़िन चढ़ि गुलुफन चढ़ो मुरवन बचो दवाइ।
सो चित चिकनेजघनचढ़ि तितहिँपरोबिछिलाइ
लगन नई सों सखि गई सुधि करि लखन तमाल
मग लखि ललन मगन भई प्रमुद समुद मै बाल॥
दुरी दुरायेहू हिये झीने पट वंसी न ।
सखितियदिसिलखिहँसिकही है यह वीन नवीन
कितिक मदन को रूप री कोन सिँगार कहाइ।
यह आकी छवि छैल की छलकि रही तकि आइ॥

सूखे पतवारी बली कुंजर लीन बनाय ।
करनधारु बिनती अली नव संकेत बताव॥१२५॥
परदे बाला बर लसै घेरु दाब नहिँ पाय ।
गिरवानहु असि तौ न तकि रीझहुगे सुकवाय ॥
इहाँ दुरावत कत लला कपटकला के जोर ।
यह नहि जानत हो भला चीन्हत चोरहि चोर॥
तकितकिजिनहिलतारहौ थकिथकिसीसनवाय।
ते मुज भाई रावरी पी मन देहि भँवाय ॥१२८॥
तन मन रीझे मार से सुन्दर नन्दकुमार ।
यातें है उचितै चितै हँसि बोलै इक बार॥१२९॥
पुहुपित पेखि पलासबन तव पलास तन होइ ।
अब मधुमास पलास भो सुचि जवास सम सोइ॥
मुह माहीं नाहीं रही ही मैं हाहीं धारि ।
गर बाहीं कीन्हे तिया रही पियाहि निहारि ॥
मदनातुर चातुर पियै पेखि भयो चित लोल ।
पुनि पट सरकौहैं भये फरकौहैं सुकपोल॥१३२॥
सजल जलद से नैन ये बैन रुके किहि भेव ।
अंग थरहरे क्यौं भरे खरे तनोज पसेव ॥१३३॥

प्रीति प्रतीति लिये मुधा मान ठानि बोलै न ।
सौहैं सौहैं खात कित होत हसौहैं नैन ॥१३४॥
लखि सुछबीले रीझिहो सुछबीली छन माहिँ ।
छिगुनी छोरहु के छले कटि ढीले ह्वै जाहिँ ॥
पी पेखि ती-वदन निसि दिवस ससी अनुहारि ।
तनु मनु हारि चरन लगे करन लगे मनुहारि ॥
नहि आये निसि आधिहू कहुँ छाये बस नेह ।
उर उरझी गुरु लाज के तिय यह जिय सन्देह ॥
हरिछवि सुधि बुधि हरि लई बीर भयो यह हाल ।
परिरंभन लागी करन जमुनातीर तमाल॥१३८॥
धन इत तकि कित चित गयौ कैसो चन्दनलाइ ।
अहे कहे तो तन रहे सघन अरुन कन छाइ ॥
रिसु करि कछु बोली न ती इत उत डोली ऐन ।
सनखौहें पी तकि भये तनु अनखौहें नैन॥१४०॥
कोऊ कोरिक खोरि दो नासा भौंह सिकोरि ।
दूजी हरितन हरितकैं इत तें हित दृग जोरि ॥
सबविधिअतिरतिकोविदा कोककला की नाइ ।
कनकवेलि सी केलि में तिय पिय हिय लपटाइ॥

रमनगमनसुनिसखिनतन तकिनकहतिकछुबार।
नैननि इन्दीवरनि तें बहति कलिन्दीधार ॥
सुखदायक दूती चतुर करि परिपंच बनाय।
छरिजुनिसातमसुबसुकरि नवलहि दई मिलाय॥
कामुक अँधियारी गली हरष्यौ कामिनि हेरि।
आलिङ्गन करतहिँ अली आये बारिद घेरि ॥
तिय तव ये नैना दिये हिये उछाह अछेह ।
पिय बिछुरे दुखप्रद भये नेह किये अब मेह ॥
धीर अभय भट भेदि कै भूरि भरी ह्व भीर ।
झमकि जुरहिँदृगदुहुँनिके भेकुमुरहिँनहिँबीर॥
सुनि गौने की बात कल भये पनसफल गात ।
मसकि गई आँगी नई उकसे उरु उरजात ॥
अहनिसि नहिँ ढिग तें टरै भरै अनन्द अनेक।
बिन देखे मनभावनै कल न परै पल एक ॥
अँगिरानी आँगी चितै दृगनि दृगनि तें जोरि ।
रँगरातो रँग राति कै बिहँसि गई मुख मोरि ॥
चारु भये भरि भार कुच सकुच भई रसलीन ।
लगि नयनलौंकरन क्यौं ललन न होय अधीन॥

बाल गुलाबप्रसून कों अब न चलावै फेरि ।
परीं लाल के गात मैं खरी खरोटैं हेरि ॥१५२॥
झाँकि झरोखे जनि जुरैं रिझवारिन की सेन ।
वल्लि कहि मोहै रावरै ये न नैन लखि के न ॥
धनि धनि है धन के चरन सिञ्जित मनिसंभीर ।
कलहंसन के चेटुवन मन ललचावन बीर॥१५४॥
जब तन दीप्यौ दीप लौं अतन जग्यौ मनमाँह ।
ललचिचले चख तब चले को निज तन की छाँह॥
नख-रेखैं देखैं नये श्रमकन छलकैं छाय ।
पलकैं झलकैं पीक की अलकैं रहे दुराय ॥१५६॥
हों न सखी ऐसी लखी जैसी है यह चाल ।
लालनयन सद मद छके झूमि रही यह बाल ॥
सहितभलाकहिचितअली लिये कजाकी माहिँ।
कला लला की ना लगी चली चलाकी नाहिँ॥
गहि वरुनी वरछी बनी अरु कटाछ तरवारि ।
नैन वीर लैं भौर धसि धीर अमी रहि मारि ॥
वानि तजैं नहिँ बावरे कानि कि हानि लजै न ।
सौंहैं दरसत साँवरे होत हसौंहैं नैन ॥ १६० ॥

आज अचानक गैल में लखत गयौ हरि धीर ।
काढ़े कढ़त न गड़ि रहे अँखियनि में बलवीर॥
बौरी मोहि विचारि कै कत कहियत छल बैन।
इतनोई कहि चुप रही भरि आये जल नैन॥१६२॥
ससिलखिजगतबिदितकहो जायकमलकुँभिलाय
यहससिकुँभिलानोअहो कमलहिलखिकिहिभाय
सारी सारी लै भजे चढ़े कदम की डाल ।
अबला जन गड़ि जाति हैं अब लाज न गोपाल॥
घरहाइन की घेरहू लाज सकी न बचाय।
अरी हरी चित लै गयौ लोचन चारु नचाय ॥
आयौ दुसह बसन्त री कन्त न आये वीर ।
तनमन बेधत तंत री मदन सुमन के तीर॥१६६॥
जातरूप परिजङ्क की पाटी रहि लपटाइ ।
मीच बीचही चहि चकी तनु न पिछानी जाइ॥
दामिनिनिजदुतिदरपकै दमकिनअबहूहिकोति।
कामिनिहूं तो सी लसै बिमल भरो तन जोति॥
जौ वाके सिर पै परै छाँह सुमन की आय ।
तौ बलि ताके भार सों लंक बंक ह्वै जाय॥१६८॥

सब गनना चितचोर सों बनी सुनत यह बोल ।
भरके तनसिज तरुनि के फरके गोल कपोल ॥
सोच विमोचन हैं अली भरे सकोचन माहिँ ।
लोचन में लाली भली रोचन सी दरसाहिँ ॥
लागे नैना नैन में किये कहा धों मैन ।
नहि लागे नैना रहैं लागे नैना नै न ॥ १७२ ॥
चपति चंचला की चमक हीरा दमक हिराय ।
हासी हिमकर जोति की होति हास तिय पाय॥
लाजनि बोलि सकी न ती लागे तीर अनंग ।
नीर नयन तें अयन तें पी निकसे इक संग ॥
यह न लगी है कामिनी गरे साँवरे आइ ।
मनु दमकति है दामिनी घनस्यामै लपटाइ ॥
अरुन माँग पटियां चितै सौति परैं चकि घूमि।
सोहै सींव सोहाग की रससिँगार की भूमि ॥
सुमन-छरी सी बन गई इत तें जमुनातीर ।
तकि उत तें आवति दई छरा छरी सी बीर ॥
तदपि जतन करि मन धरौं तदपि न कन ठहराय
सिम्रतनिमाननभानको घन समान उड़िजाय॥

नारी बूड़ि गई सुनत कुंजविहारी नाम ।
करि उपाय हारी अजौं सुधि न सँभारी वाम ॥
यह श्रमकन नखखतन को सैन जुदी अँग मैन ।
नील निचोल चितै भये तरुनि चोल रँग नैन ॥
विधि वह दिन ऐहै कवों हाय मिलैगी धाय ।
चन्दकला सी बाल वह सियरैहै यह काय ॥
हाइ गई हौं आज जब भाइ कही वहु वार ।
धसत कुसुम के दार मैं छद छाये केदार॥१८२॥
सुमन सुमन अरपन लिये उपवन ते धन ल्याइ।
धरनी धरि हरि तकि कही हाइ भयौ श्रम जाइ॥
यौं बिभाति दसनावली ललनावदन मझार ।
पति को नातो मानि कै मनु आई उड़ भार ॥
हौं न दुनी मैं यह सुनी रीझत हो गुन पाय ।
मो निगुनीहूं पर कृपा करत रहो यदुराय॥१८५॥
पीछे तें गहि लाँकरी भरी आँकरी हेरि ।
चढ़ै नाँक री नाँ करी हरे हाँकरी फेरि॥१८६॥
ठकुराइन-पाइन चितै नाइन चित चकवाइ ।

स्वेद भरे वर गात री थरथरात बेहाल ।
को गोरी पर डारिगो रोरी मारि गुलाल॥१८८॥
रुकति चलति चलि चलि रुकति भुकति ल-
लित गति पाय ।
श्रावति सौरभ सों सनीं सियरावति लगि काय॥
सीत असह विष चित चढ़ै सुख न मढ़ै परिजंक।
विन मोहन अगहन हनै बीछू कैसो डंक॥१९०॥
मोचितलियोसुचितदियौ उचितकियौलगिकाय
सो मित सोभित होइ कित पियौ सुधाधरहाय॥
बीतव सुखसीवाँ दई दई भई कह चेति ।
पियविन कोकिल काकली भली अली दुखदेति॥
चलिसुकेलिघरघनअभार झारीनिसि सुखदानि।
कामिनि सोभा शानि तूं दामिनि दीपतिवानि॥
छीनी तार मुरार सों तिहिं दीनो समुझाय ।
सोमी चितवनि यार की कटि न कहूं कटिजाइ।
अंगकंप स्वरभंग भो विवरन अति मनरंज ।
नन्दनन्द मुखचन्द सों मूँदि गये दृगकंज॥१९५॥
डरत न हिम हिमभानु तें करत मधुरवर वैन ।
का ललनाश्राननलिन दिवसमलिननिसिमैन॥

नहिँ है बेनु बजावनो लेनु दही को दान ।
यह है लाल मिटावनो राधाजी को मान॥१८७॥
करि उपचार थकी चहो चलि उताल नँदनन्द ।
चन्द्रक चन्दन चन्द तें ज्वाल जगी चौचन्द ॥
एरी खनहुँ सुख न लखों दुखदो दुखद दिखाइ ।
भीखन भीखन लगत है तीखन तेख बनाइ ॥
जेवर बने लतान के ताप गने सबिता न ।
ते बितान छबितान तनु निसिदिनरहत बितान।
नेहु भूलि सपनेहु मैं तकत न दूजी ओर ।
निसिदिन बदन सुचन्द के लोचन चारु चकोर॥
मनरंजन तव नाम को कहत निरंजन लोग ।
जदपि अधर अंजन लगे तदपि न नीदन योग ॥
रंगभवन सखि संग में आये स्याम सुजान ।
हग बिहँसे छबि लखि गयो बिनहि मनाये मान॥
धीर लियो हरि बीर री स्याम सरीर दिखाय ।
चित चलाय ही पीर री गयौ अहीर जगाय ॥
सुकनकवनकदली भलो कमर खरीही खीन ।
निरखि अमोल सिरी ललो परिहो कदम यकीन॥

ललित लिसदृता नखन यौं चरन अरुनता रंग
ज्यौं विमला सखि की कला लसति सुसन्ध्यासंग
हार हेरानो हेरि इ टेरि कही बहु बार ।
समीकार नहि सुनत है चकित लुनत है हार
मोही मोहि दिखाय कै मनमोही छवि अंग ।
सखि दुख दै सुख लै गयौ निरमोही निजसंग
सेस छवीहि न कहि सकै अगम कवीहि सुधीर
स्याम सवीहि विलोकि कै वाम भई तसवीर ।
तनक निहारी जवहिँ तें ललक तिहारी आय
छनक सँभारी सुधि नहीं कुञ्जविहारी हाय ॥
आज रही गृहकाज तजि अजब तमासे माहिँ
डारि तुला तोली तियै तुली छमासे नाहिँ ॥
स्यामरंग के परस तें उपज्यौ पुलक सरीर ।
आली वनमाली मिले नहिँ जमुना को नीर ।
काम कमान तनीकि दृग दीपक काजर रेख
कै येतो भौंहैं वनी सौंहैं पाय सुवेख ॥ २१३ ।
है हरि छोभित करि दई मयन पयन सरमारि
हरिहि हरिननैनी लगी हेरनहार निहारि ॥

सरसिजात तव बदनकों दरसिजात निति लाल।
बरसिजात सुखसात तव परसिजात जब बाल॥
कजरारी छवि पेखतहिँ मुरछि परे ब्रजराज ।
कहि कौने लौने नयन टौने कीने आज ॥२१६॥
गहत अरुन कत होत है पहिरत कनक अकार।
लखतअसितसितहँसत यह अहो कहो हरिहार॥
एतेहू ठिकठान पैं देखति हौं उत सान ।
यह न सयानी देति हौं पानी मागत पान ॥
कहुं निसि मैं बसि मयनवस आये अयनउताल।
लाल नयन भे बालके लालनयन लखि लाल ॥
परि पा करि बिनती घनी नौंमरजा हौं कौन ।
अब न नारि अर करि सकै जदुबर परमप्रवीन॥
आप भलो तौ जग भलो यह मसलो जुअ गोइ।
जो हरिहितकरिचितगहो कहो कहा दुख होइ॥
प्यारो घेरु निहारि कै चूम्यौ पाटल पान ।
प्यारी कर मुकुलित कियो हौमिथ जाननआन॥
सो तिनकै दृगदीपनहि जा समीप ठहराहिँ ।
नागवलीहौ है अली रोमवली यह नाहिँ॥२२३॥

कनकवरनि मोहन लसैं तरनितनूजातीर ।
लखि लखायै छबि कछू छति न छोभ मनधीर ॥
टूक तौ मार मरोर तें मरति भरति है साँस ।
टूजे जारत माँस रौ यह सुचि लों सुचि माँस ॥
दमकिर दामिनि कहा दिपति दिखावतिमोहि
वा कामिनि की कांतिलों भूलि कहों नहि तोहि
ऐसेही वेधक वने ये अनियारे नैन ।
फिरि अरुनारे करि कहा ही वेधै हरि चैन ॥
वलि तेरी छवि भावरी चलि विभावरी जाइ ।
जानति स्याम सुभावरी अव न भावरी ल्याइ ॥
वेलि कमान प्रसून सर गहि कमनैत वसन्त ।
मारिमारि विरहीन के प्रान करैरी अन्त ॥२२९॥
राति अनत वसि भोर पी झूमत आये ऐन ।
निरखि न सौहैं नैन तौ करति न सौहैं नैन ॥
चंपक केसरि आदि दै तुलहिँ न कौनो रंग ।
सोनो लोनो होत है लगि दुलहिन के अंग ॥
वेत सवन मनिगन सजै विलसति सुन्दरवेलि ।
चहुँदिसि मैं राकेस सौ रही उँज्यारी फेलि॥२३२॥

भसम करत तन असमसर विषम सिसिरकेतीर।
यह निदाघ है भूलि कै माघ कहैं सब धीर ॥
इठिन में बैठी हुती नारि सु नार नवाय।
दीठिन दीठि बचाय कै इत चितई ललचाय ॥
धन तन पानिप को जऊ छकत रहैं दिनराति।
तऊ ललन लोयननिकी नेसुक प्यास न जाति॥
पसीपेस तजि आइये पहिने कुन ससपंज।
कर मुकुताइ न जाइये मुकुता बरसत कंज ॥
लङ्क गहै अङ्कन लगै परि परिजंक सकाय।
जगत अतन तन ललन के ज्यौं२ चित ललचाय॥
कारी सारी सिर धरे गिरिधारी न लजात।
सौहैं सौहैं खात सखि लखि सनखौहैं गात ॥
राजिवनैन बिना लहै लहै छनो नहिँ चैन।
प्रेमपरनि मन खग अहै उरझि रहो सुरझै न ॥
अली कहैं न इन्हैं भली लखि इनकी कुसुभाय।
सिखहितलगतननेकुचित चहहिँ सुधा विषखाय॥
अहेअहोकचसुमुखि के बिधि बिरचे रुचिजोरि॥
छूटे बाँधत हैं बँधे लेत ललन मन छोरि॥२४१॥

विधि इन अनियारे नयन कत विरचे सुनिवाल।
जिनतें हेरि किये अरी हरिहौ वेधि विहाल ॥
आय सकारे हिय सकुचि पाय पधारे ऐन ।
तिय नागरि पिय नैन तकि लगी वफारे दैन ॥
घिरि आये चहुंओर घन तिहि तकि भोरससोर।
मोरसोर सुनि होतरी तन मन मदन मरोर ॥
वे नीके नीको इहो क्यों फीकी परै चाह ।
दुहुंदिसि नेह निवाह पैं वाह वाह है वाह ॥
कहा परेपै करि रही इत देखै चित हाल ।
गई ललाई दृगनि तें छुवत कलाई लाल॥२४६॥
छैल छवीली को छवा लहि महावरी संग ।
जानि परै नाइन लगै जवहिँ निचोरन रंग ॥
जा सँग जागे हो निसा जासों लागे नैन।
जा पगगहि मति मैंन भे मैंन विवस सो मै न॥
लगिगो नैन लगे सुमन जगिगो मैन सरीर ।
अली गयो छलि गैल में छैल छली वलवीर ॥
दृगनि खुभी खूठी खुभी निसराये निसरै न ।
चल चप चितवनि चितचुभी विसराये विसरै न॥

तिगुनी तें द्विगुनी भई एक गुनी घटि लाज ।
तब मधुबन किहि ध्यान सों जान कहो ब्रजराज॥
सरकी सारी सीस तें सुनतहिँ आगम नाह ।
तरकी वलया कंचुकी दरकी फरको बाह॥२५२॥
रूखे रुख मुख प्रियबयन नयन चुराई दीठि ।
दीठि तियहि पिय पीठि दी ईठि भई सुबसीठि॥
जहाँ दुपहरी मैं रही खरी अँधेरी छाइ ।
अहे नवेली ता गली चली अकेली न्हाइ॥२५४॥
नाकरुना करु कहि थकी नाकरुना करु मान ।
कान लगैगो कान जब कान करैगो कान ॥
धनिधनि है है हार तो धनिधनि भाग अपार ।
या नवला के ही लगो निधरक करत बिहार ॥
कत सकुचे नीचे चहो कहा कहो बस मैन ।
पोंछे लाली ना मिटै लाल तिलोके नैन॥२५७॥
रनित किङ्किनी हैं न री नजर सुआवे हाल ।
मनसिज घरियारी अरी गजर बजावे बाल ॥
तरकति सरकति ही रहैं रहैं न येको बार ।
चुरियाँ थ्री कर तार की जग न रचो करतार ॥

चम्पक मैं नहिँ चन्द मैं नहिँ चपला मैं लाल ।
नहिँ कंचन मैं चारुता रही यही तन बाल ॥
चहुंदिसि सों सहवासिनी बीजन करहिँ प्रभात।
चले पसीने जात हैं गात नहीं सियरात॥२६१॥
यह स्यामा है कौन की छबिधामा मुसुक्याय ।
सोंधं चढ़ी चहि कोंधसो चोंध गई चख छाय ॥
भटक न भटपट चटक कै अटक सुनट के संग।
लटक पीतपट को निपट हटकति कटकअनंग॥
सगुन सरूप तुमैं कहैं बुध कत नन्दकुमार ।
ह्यांलों गुन न गहो रहो विन गुन पहिरे हार ॥
ललित मेंहदी बूंद यों लसत हथेरिन साथ ।
पी अनुरागी मन मनो बसत तिहारे हाथ॥२६५॥
यक तौ सरपंजर कियौ अतन तनै सर सूल ।
दूजे यह झिमिरौ भयौ खंजर संजर तूल॥२६६॥
टैया पनिभरिया कहैं तरनितनैया तीर ।
अधर विदारैं कीर री कपि डारैं चिरि चीर ॥
जानि परैगी जात हो रात कहूं करि सैन ।
लाल ललोहैं नैन लखि सुनि अनखोहैं बैन ॥

खींचि किनारा कल नदी दई बदी है लाल ।
वाह रावरी चाह मैं भई बावरी बाल ॥ २६९ ॥
बलिहारी अब क्यौं कियौ सैन साँवरे संग ।
नहि कहुँ गोरे अंग ये भये झाँवरे रंग ॥२७०॥
गड़े नोकीले लाल के नैन रहैं दिन रैनि ।
तव नाजुक ठोढ़ीन क्यौं गाड़ परे मृदु बैनि ॥
बनक मढ़े कोठे चढ़े छैल छबीले स्याम ।
खरी चौहटे मैं अरी चढ़ी रहचटे वाम ॥२७२॥
तिय पिय की वेनी गुही लखि उसास कसिलीन।
लहरि न आई महिगिरी मनुनागिनिडसिलीन॥
त्रिबिधि प्रभंजन चलि सुरभि करत प्रभंजन धीर।
तनमनगंजन अलिप्रभृत बिन मनरंजन बीर ॥
सकुचोहीं मुसुक्यानि सों ललचोहीं अँखिय.नि।
मो तन तनक चितै गई दुखद भई सुखदानि॥
कीजे कहर सब सबसे प्रबिसे आय प्रभात ।
आप कही जे बलि कहा कहत पसीजे गात ॥
चितवै चित आनन्द भरि चारु चन्द की वोर ।
प्रीति करन की रीति कों सिखवैं चतुर चकोर॥

सतरोहैं मुख रुख किये कहै रुषौहैं बैन ।
सैन जगे कि नैन ये सने सनेह दुरै न ॥ २७८ ॥
सीसी कै उझकै झुकै चलत रुकै जदुराय ।
नव मखमल के पामड़े हाय गड़े ये पाय॥२७९॥
हाहा करजोरे खरे बलि चितवो पिय वोर ।
कहँ यह मृदुतन रावरो कहँ हौ परम कठोर ॥
वनमाली दिसि सैन कै ग्वाली चाली बात ।
आली जमुना जाउँगी कालीपूजन प्रात ॥२८१॥
मलयज घसि घनसार मैं खौरि किये गयगेनि ।
सेत बसन सजि तजि गली चली चाँदनी रैनि॥
चतुर चितेरे पानि कौं चूमन जोग विचारि ।
रही निहारि सुमित्र को चित्र चित्र सी नारि ॥
गई ललाई अधर तें कजराई अँखियान ।
चन्दन पंकन कुचन मैं आवति बात तियान ॥
क्वनित वेनु मारुत परम ध्वनित विहँग अलिगुंज।
वलिचलिजहँ तम दरस सम पुंज तमाल निकुंज॥
विरहवरहिझरसीतकर लखिर मरति कराहि ।
ये बोरी किहि धन मले मलयज लावति काहि॥

क्यौं जितिये कहिये भला तुम छल बल सुप्रवीन।
करिये कौन कला लला हम अबला बलहीन ॥
तब सीरी तकि तकि सिरी भई रही छल नीर।
अब गरमी मन मैन की आय गई बलबीर॥२८८॥
ऊधव माधव जू बिना सुखदाहू दुख देत।
होत चैत हरि लेति चित चैत चाँदनी चेत ॥
जबतें पीछे छिपि लखी दरपन विधु मुख छाँह।
तबतें तेरे दरस की भरी हरी चित चाह ॥२९०॥
जबतें न्हान गई तई ताप भई बेहाल।
भली करी या नारि की नारी देखी लाल ॥
खंजन कंज न सरि लहैं बलि अलि को न बखानि।
एनी की अँखियानि तें ए नीकी अँखियानि ॥
छैल छबीली छाँह सी चैत चाँदनी होति।
दीपसिखा सी को कहै लखि खासी तन जोति॥
मन खिलार तन चंग नव उड़त रंगरस डोर।
दूरिहि दोर बटोर जब जब पारै तब ठोर॥२९४॥
बड़े बड़े कच छुटि पड़े उमड़े नैन बिसाल।
काढ़े भामकाढ़ेही गड़े अड़े खडे नँदलाल॥२९५॥

इक दृग पिचकारी दई इकहि लई ही लाय ।
सखी बिहारी दिसि लखी रसनहिँ दसन दबाय॥
हाहा करि हारी भई जामिनि सरद न जान ।
लखत कलाधर देखवी कामिनि मान सयान ॥
तन सुरंग सारी नयन अंजन वेंदी भाल ।
सजे रही जगि जालभा भामिनि देखहु लाल ॥
सब जुरिके दरसन करो परसन है सुख मोइ ।
या कामिनि के उर लसैं गुर ससिसेखर दोइ ॥
गुर उतंग सुर सहित हैं बरनत मो मन थाक ।
वेसरि मुकुतनि पाय कै सरसति सोभा नाक ॥
चलनिभली वोलनिभली सुछवि कपोलनि आज ।
तकि सौंहैं चितवनि भली भले बने ब्रजराज ॥
कहति लगन आये न क्यौं ज्यों२ राति सिराति।
त्यौं २ वदनसरोज पैं परो पियरई जाति ॥३०२॥
जुवतिन सँग वर पूजि कै लगी भाँवरी देन ।
परतिय मुख पिय रुख निरखि हरषभरी अनखेन॥
तबहुं मजाकी आज लखि सकल सजाकी नारि
चखुनि चलाकी सों अरी करी कजाकी मारि॥

अब निधरक सोहें चलो तरक भलो नहिँ कोइ।
रहे रिसौंहें नैन जो भये हसौंहें सोइ ॥ ३०५ ॥
का केकी की काकली काकाली निसि चैन।
वन माली आये अली बनमाली आये न ॥३०६॥
जगमगात है हीन कौं या आनन लौं चन्द।
ताही तें पूरन भये मन्द परे तम फन्द॥ ३०७ ॥
सुनि सुनि केकी कूक री हूक परी हौं बीर।
ता पर जी घातक अरी चातक करत अधीर ॥
गगनलता तें वलित हैं जहँ तमाल तरु जाल।
धेनु धावरी रावरी लखि आई गोपाल ॥३०९॥
दुरति दुराये तें न रति बलि कुंकुम उर मैं न।
प्रगट कहैं पति रति जगे जगी जगीले नैन ॥
सपन न दरप न सदनहूं लखौं ललन अपराध।
कहि अब कैसे पूजिहै मान करन की साध ॥
दुपहर भये कहर किये जहर लगाये नैन।
मनरंजन न जगे अजौं अब तकि अंजनदैन॥३१२॥
यहअहनिसिबिकसितरहै वहनिसिमैंकुँभिलाय।
यातें तो मुख कमल लौं कहो कहो किमि जाय॥

संग अनंग-अनी लिये किये सिँगार सुअंग ।
रही पिया-छतिया लगी तिया पगी रतिरंग ॥
काहि छला पहिराव री हौं बरजी बहु वार ।
जाय सहो नहिँ बावरी मिहदो रँग को भार ॥
नियरे वैरिनि ननद लखि सो जियरे को घाय ।
पियरे पट को लटक सखि हियरे खटकति आय॥
चटक भई दुति टूनरी देखि तूनरी चाल ।
पहिरि करैंगी खून री गहिरि चूनरी लाल॥३१७॥
हेरि विहारी की दसा वरनत नेकु वनै न ।
चिलक तिहारी चाहि कै सूधी तिलक लगै न॥
नैन उनींद्रे कच छुटे मुखहि लुटे अँगिराय ।
भोर खरी सारसमुखी आरसभरी जँभाय॥३१६॥
कौतुक जोहो रास को अरु मोहो ब्रजराज ।
चलो भलो मसलो हलो एक पन्थ द्वै काज॥३२०॥
कानकबिन्द सुरकी रुकुम चन्दन मिलत जमाल।
चन्दन तिलक दिये भई चिलक चौगुनी भाल॥
बानी बोलि कठेठिये रहति रुपानी जीय ।
इत आरी वर मानिनी वसु लालन के हीय ॥

सखि सँग जाति हुती सु तौ भटभेरो भो जानि।
सतरौहीं भौंहनि करी बतरौहीं अँखियानि ॥
तेरी सरल चितौनि तें मोहे नन्दकिसोर ।
कैसी गति ह्वैहै तकैं कुटिल तरल चख छोर॥
पी पाती पाते उठी तौ छाती सियराइ ।
सुनि सँदेस रसभेद सों गई स्वेद सों न्हाइ ॥
अरी बिलंब बरी भई कालिन्दी के न्हान ।
इन्दीवरनैनी निखै चलि चित थित करि ध्यान ॥
थहरि उठै हरि-तन चितै नैनन बन भरि लेय ।
करन भारि बोलै हँसै गहन उरोज न देय ॥
रची सची सी तोहि री निजकर करि करतार।
तातें निसिबासर रहै तार भयौ भरतार॥३२८॥
उसरिबैठि कुकि काग रे जौ बलबीर मिलाय ।
तौ कंचन के कागरे पालूं छीर पिलाय ॥३२६॥
तव पद पटबो नहि मिलौ पदुम हारि बर मानि।
लजित होइ निसि मधुकरै भषत हराहर जानि॥
लाल उतारि दई अली मैं मेली उर बाल ।
गई पसीने न्हाइ सो भली चमेली माल ॥३३१॥

भूषन वसन सजे तिया सैन करै नहिँ सैन ।
छन निकसै दरसन पिया छन प्रविसै रँग ऐन ॥
आये स्याम विदेस तें वाम मिली जव जोइ ।
रहे अलोने गात जो भये सलोने सोइ ॥ ३३३ ॥
झलकनि अधरनि अरुन तें दसननिकी यौं होति ।
हरि सुरंग घनवीचज्यौं दमकति दामिनि जोति ॥
समुझि एकु मो नेह कौं नेकु लगे नहि नैन ।
याते अरुन भये किये सैननहीं पर सैन ॥३३५॥
यौं सुखमा सरसाय री ये तेरे नख पाय ।
मनहुं कमलदल विधुकला अमलविरोधविहाय ॥
हेरति हैं सो तैं चकित हेरति पावति नाहिँ ।
चोरिलिये चितचोरचित एकहि चितवनिमाहिँ ॥
निसिदिन पूरन जगमगै आवै धोय कलङ्क ।
जो तो वा मुख को प्रभा पावै सरद मयङ्क ॥
धीर मढ़त मन छन नहीं कढ़त वदन तें वैन ।
तुरत सुरत की सुरत कै जुरत मुरत हँसि नैन ॥
घनस्यामहि लहि कामवस दीनी वेंदी लाल ।
ताहि डारि दै पटिक कौ कचनि चोराई वाल ॥

इकहि आँक सों मोहि कै मोहि रहे हैं मोहि।
हरिहर लों पी कों कहै यहै निहोरो तोहि ॥
स्यामबिन्दु नहिँ चिबुक मैं मो मन यों ठहराइ।
अधमुख ठोढ़ी गाड़ को अँधियारो दरसाइ ॥
ललनचलनसुनिचितचहै लखन चखन समुहात।
कहन लगै फिरि जाय है आय दहन लों बात॥
हरि बिधि बनई औरई काहू को न डबीठि ।
जाकों जा अँग मैं लगी दीठि परी नहि नीठि॥
आली तो कुच सैल तें नाभि कुण्ड कों जाय ।
रोमाली न सिँगार को परनाली दरसाय॥३४५॥
गुलुफनि लों ज्यों त्यों गयो करिकरिसाहसजोर।
फिरि न फिर्‍योमुरवानचपि चितअतिखातमरोर॥
मोहन बान चलाय कै मोही मोहि अनंग ।
रही न कुलकी कानि री अब परि परनि भुजंग॥
घर हरि धरि घर जाइये अब अर हरि किहिहेत।
कालि प्रभात मिलायहों यहि अरहरि के खेत ॥
गमन सुनत धन तन दई मदन जो लाइ लगाइ।
ललनबदनलखिरहिगई सखिदिसिचखनचलाइ॥

दीठिनिसेनीचढ़िचल्यौ ललचि सुचितमुखगोर।
चिवुक गड़ारे खेत मैं निवुक गिर्यौ चितचोर॥
आये लाल प्रभात लखि माल वदन की हाल।
अति उताल सखि वाल उर मेलौ मुकुतामाल॥
जुगजुग ये जोरी जियैं यों दिल काहु दिया न।
ऐसी और तिया न हैं ऐसे और पिया न॥३५२॥
जहँ जहँ डोल हरे हरे धरे छवीली पाय।
तहँ तहँ चोल तें चाँदनी चटकीली ह्वै जाय॥
मुख तें नजर अनत गई तौ त्यौरहि रहि तानि।
पीकहवहसगसिजनिसा ससियहसुनि मुसुक्यानि॥
पावस मास अटे पटे अटल पटल घनघोर।
भोर साँझ आहट मिलै चटकाहट वकसोर॥
इक तो मदन विसिख लगी मुरछिपरीसुधिनाहिँ।
दूजे वद वदरा अरी घिरि घिरि विष बरषाहिँ॥
कहै कहा न कहा कहै अहै अरंभहि माघ।
मेरे हित तेरे भरे तन कन ओघ निदाघ॥३५७॥
वखि हाँ की वा दिन विहँसि जवहरिहाँकी गाइ।
अव ना की मोसौं कहा वाँकी भौंह चढ़ाइ॥३५८॥

पहिले कहिले काहन जो तब गहि ले पी अङ्क ।
नत गहिलो पछतायगो लखि खनमाहिँ मयङ्क ॥
कबि समता औरन लहैं लखि छबि बलय अलेष।
इनहीं को परिबेष भो रबिहि ससिहि परिबेष॥
हे ही तूं दरकत न कत अजहुं भयहु पाषान ।
बिरहदहन की दाह दहि लहि प्रबाह अँसुआन॥
नहिँ यह नाभी रावरी सुनि प्यारी ब्रजनाह ।
बिधि रचि बिमल खरी करी परी चिबुककीछाँह॥
हौं बरजी बहु बार जी पी परदार बिहाय ।
अब से मरजादहि गहो रहो कृपा करि आय॥
जब तें तेरे कुच रुचिर हरि हेरे भरि नैन ।
कनककलस कंबुक कुकुद नीके तनक लगे न ॥
चन्दन कीच चढ़ायहूं बीच परै नहिँ राँच ।
मीच नगीच न आ सकै लहि बिरहानल आँच।
आज रहे बलबीर री बीर अबीर उड़ाय ।
सोभा भाषि न जाय जो आँखिन देखि न जाय॥
जबतें हँसि वह साँवरो गयौ कनखियनिचाहि ।
मृग कैसे दृग में भई अनमिष निरखनि याहि॥

मो मति थकित चकित भई नेसुक भेद न पाय।
अलख तिहारी गति दई कहो कही किमि जाय॥
और गयौ जरि लेप तें तन चन्दन स कपूर ।
अरु चितये चित ह्वै गयौ चन्द्रप्रभा चकचूर ॥
गुरुजन में मूंदे वदन रही चले घनस्याम।
वात न आई नाक मैं वाती नाई वाम॥३७०॥
वरु वरछी के वर लगैं खरग लगैं सर पैन ।
कारी लगैं कटारिहू सखि पर नैन लगैं न॥३७१॥
रस वरसत है रावरो तन पुलकित घनस्याम।
कहो अधर मैं कौन को रहो अधकहो नाम ॥
आई सिर नीचे किये खीचे नैन निहारि ।
कहत रुखाहट सों गई चित चिकनाहट नारि॥
ज्यौंज्यौं चन्दन को लजन लेपत हौं निज गात
त्यौंत्यौं ललना के नयन तकितकि अतिसियरात॥
नहिँ अनलगिवे दीठि कौं ईठि दिठोना दीन।
टोनो मन वसकरन कौं ये कपोल मैं कौन ॥
छिय लोचन मैं भरि रहे सुन्दर नन्दकिसोर ।
चलत सयान न वावरी मान धरौं किहि ठोर॥

कहत थको ये चरन को नई अरुनई बाल ।
जाकि रँग रँगि स्यामसूं विदित कहावत लाल ॥
पहिर नवेली नीलपट मृगमद तिलक लगाय ।
केलि अयन आली लिये चली अकेली जाय ॥
सीस झरोषे डारि कै झाँकी घूंघट टारि ।
कौवर सी कसकै हिये बाँकी चितवनि नारि ॥
विचरि चहूंदिसि लखत हैं वर पूजै ब्रजराज ।
चन्दमुखी कों लखि सखी सुरुजमुखी सी आज॥
चूक समै न विचारि तू वादि करै अपसोस ।
अपने करम फलद चितै हरि को देइ न दोस ॥
लाल ललाई ललितई कलित नई दरसाय ।
दरसो सारसरसभरे दृग आदरस मगाय ॥३८२॥
ए जघनति पीनै कि सौं हौं कीने अपराध ।
तेरे त्यौर तरेर की नित मेरे चित साध ॥३८३॥
सास ननद नाहिन सदन पिय मन करन वरात।
लखि परोस नँदनन्द को हिय न अनन्द समात॥
अहे अरे आँगन खरे हास भरे ब्रजराज ।
लखिबे कों ललकत हियो खरी भरी दृग लाज॥

अरुन स्याम बेंदी दिये मुकुर दरसि मुसुक्याय।
मनहु विमल सर ससि गयौ कुजसनि संग लवाय॥
लाल चलत लखि बाल के भरि आये दृगलोल।
आनन तें बात न कढ़ी पीरी चढ़ी कपोल॥३८७॥
टरति न चौबारे खड़ी अरी भरी-रस बाम ।
अरो खरो तहँ साँवरो प्रेमभरो बस-काम ॥३८८॥
नाभि भौंर परि किमि कढ़े मनकरिसाहसजोर ।
त्रिवली तरल तरंग दै डारि डारि ता ठौर ॥
उततें नेकु इतै चितै राति बितै तजि कोह ।
तेरो बदन सुहास सों ससिप्रकास सों सोह ॥
कत इत ताकति ताकि उत करत तमासो मैन।
दौरि रहे थकि दोइतें दुहु के नैन थके न ॥३९१॥
लसत पीतपट हरि कटी ऊँचे करि दृग नीच ।
मनु चपला छवि सों पटी है लपटी घनवीच ॥
अटू लटू सी ह्वै रही सनी सनेह विसाल ।
बैठे पेखि रसाल कों रोम उठे ततकाल ॥३९३॥
मरन गई जमुनाजलै जोहि लखै ललचाइ ।
देखन मरि छवि छैल की आई चेत गँवाइ ॥

सुबरन पाय लगे लगै दुरित उदित जगमाहिँ ।
परत रजत पायल अरी सुबरन की ह्वै नाहिँ ॥
बिथुरे कच कुच पैं परे सिथिल भये सब गात ।
उनदोहैं दृग में भई दुगुनी प्रभा प्रभात ॥२८६॥
मैं मोही मोहे नयन खेह भई यह देह ।
होत दुखै परिनाम करि निरमोही सों नेह ॥
थाके खंजन भृङ्ग मृग झष लखि बाँके पै न ।
वा ललना के लसत हैं चपल चलाके नैन ॥
उत तकि२ ताकैं ससी लखि सखि रोष न धाइ।
नँदनन्दन दूहत गगन छुवत न हैं थन गाइ ॥
चित्रभानु जे करत हैं दीपनि बीच प्रकास ।
तेती तेरे तेह तकि चकि थकि भरत उसास ॥
जिहि पहिरे छगुनी अरी छिगुनी छबिछहराहिँ।
सोने के लोने भले छले छले किहि नाहिँ ॥
आगे चलि पाछे चलै फिरि आगे समुहाइ ।
तरुनी तरल तुरंगिनी चली अली सँग जाइ ॥
हौं हारी समुझाय कै चरचारीहि डरैं न ।
लगैं लगोहैं नैन ये लित चित करत अचैन ॥

सूरज कर परचण्ड सों दिन अंगद है बीर ।
रीछराज हनुमान से निसि धारौं किमि धीर ॥
पहिरन की हौसै रही मो जियरे जदुराय ।
पहिरे कंचनहार हौं हियरे जाय हिराय॥४०५॥
जाय उतै वलि पेखिये छाय रही छबि स्याम ।
सोभति वेलि विकास सों लसति हास सों बाम॥
सुप्रसंसा या बात की करि जातीगन पास ।
धनि जगती मैं चातकी इक स्वातीघन आस ॥
झीनी सारी सजि लगी न्हाय निरखि जदुराय।
खरी सकोचन सों भरी लोचन रही नवाय ॥
ल्याई लाल निहारिये यह सुकुमारि बिभाति।
उचकै कुच कच भार तें लचकि २ कटि जाति॥
मैं न लखी ऐसी दसा जैसी कीनी मैन ।
तब तें लागे नैन नहिँ जब तें लागे नैन ॥४१०॥
जाहि जोहि भारद भई मरी परी दुख फन्द ।
ताहि सुधाधर क्यों कहैं दारद सारद चन्द ॥
या दिन लों चित पै चढ़ी आँखिन लागि लगाय।
भुवन भरन आई गई मो ही आगि लगाय४१२॥

तकि बिकासता तरलई नई नारि दृग नाह ।
कमल धसे बन माह लजि कमल वसे बनमाह॥
घरहाइन चरचैं चलैं चातुर चाइन सैन ।
तदपि सनेह सने लगें ललकि दुहूं के नैन ॥
सजि सुबरन अभरन तिया तजि रसना मंजीर।
सेज परी रति दूसरी चितवति मग बलबीर ॥
हरिहि हेरि ह्यौ हरि गयौ बिसिष लगे झषकेत।
थहरि सयन तें हेत करि डहरि रहरि के खेत॥
अति सूछम लखि लङ्क को जिय कलङ्क ठहराइ।
नीबी कसत न ओढ़ की प्रौढ़ सखी डरि जाइ॥
लङ्क तलक छलकत चितै इक पल पलक परै न।
अलक तिहारी खलक के करि २ खून डरै न ॥
झूमिझूमि मुख चूमि ले झुलनी मुकुतनि साथ।
मनहुँ सुरासुर गुर ससिहि फिरि २ नावत माथ॥
डोलै नहिँ खोलै नयन मौन भई मन मारि ।
गोरी गोरी पैं अरी कौन ठगोरी डारि ॥४१९॥
तकति तिरीछे ईछननि पीछे भौंह चढ़ाय ।
सरनधँसतिबिहँसतिकसति अँगियाबँदअँगिराय॥

काहि पुकारो को सुनो को न उघारो नैन ।
हरि कारो सुधि लै गयौ दै गारो इक सैन ॥
चलत सदन तें सखि दई मदन ठगोरी डारि ।
पियसूरति लखि कै भई तियमूरति अनुहारि ॥
रोम उठे तन कंप श्रम अनमिष चखवन छाय ।
कर न चलै वैनन कढ़ै वदन गयौ मुरझाय ॥
गली साँकरी हेरि री दई काँकरी मारि ।
नहिँ विसरै विसरायहूं हरे हाँ करी नारि ॥
इष्टदेव कै वा कह्यौ पिय आवैं निसि माहिँ ।
वोई आये होंहिगे आप लखैं मैं नाहिँ ॥ ४२६ ॥
जात सखी काहु न लखी रहे अथाइन गोप ।
लोप भई तौ जोन्ह में निज अंगनि की ओप ॥
पाती आई पीतपट छाती लई लगाय ।
दई लपट विरहागि की दुगुन गई लपटाय ॥
नई चाह में डुवि रही दही विरह वर नारि ।
छला लला को लै लई मुदरी दई उतारि ॥
ए कुच सुवित कठोर कल लखि यह श्रीफलहाल ।
चढ़े लगी झोरे विना तोरे वाल अवाल ॥४३०॥

बिन चाहे नहिँ चैन चित चाहे तेहु न चैन।
कौनि कला के विधि रचे चाहि लला के नैन॥
कहि यह कौनि दसा भई हरिर उठति बखाय।
मदन दई बौराय कै मदन गई यह खाय॥
जे तीषमे ग्रीषम रहे सुख प्रद सोरे कुंज ।
ते अगहन हिय गहन बिन भये दहन के पुंज॥
हरितनहरितनकत तकै हरितन हरित निहारि।
चरितनतोतनलखिपरै कितचितहितनविसारि॥
ललित नीलकन चिबुक मैं लसत प्रभा लहि दून।
मनु अरसी की पाँखुरी लगो गुलाब प्रसून॥
गुरजन दुरजन मैं अली डरजन बनज छुवाय ।
सिरमनि चिकुर चुराय कै गली चली ललचाय॥
हौंहूं कहूं सिधारिये चित बिचारिये काहि ।
बलि बरषारितु आय है जियत पाय हैं याहि॥
लखि सखि री दूत आय खन खेद खेद भो दूर।
बारिज अरु बनिताबदन बिकसे निकसे सूर॥
चहुंकितचितवैचितचकित सजल किये चल नैन।
लखि सनवा मनवा परै मन वाकै नहिँ चैन॥

हाहारी हारी हगै कैवाँ लाख सिखाय ।
आप भरें आपै ढरें बरबस परबस जाय ॥४४०॥
नार नवाये तकि हरी करी काँकरी चोट ।
चौंकि कँपी भभकी चकी चपी हँसी गहि लोट ।
लगे हमारे गात मैं नख रद तिनकी छाँह ।
लसहिँ विमल ही रावरे लखहु छबीले नाँह ॥
काननचारी चपल हैं कजरारी छबि ऐन ।
तातें अमल कमलमुखी कमल सही ये नैन ॥
बिन सेवे तस कुंज तकि तिय हिय लागी लाइ।
नलिनबिना नलिनीबिपिन दरस गयौसियराइ॥
तियहिय मानमरोर सुनि पाय परे पिय आनि।
मलिनाई मुख तें गई आई मृदु मुसुक्यानि ॥
नाँक उचै चष भष नचै नेह रचै कहि नाहिँ ।
चढ़ी छनछटा सी अटा अजहुँ चढ़ी चितमाहिँ॥
स्वेदभरे तनसिज खरे जागे मनसिज गात ।
सजल भये दृग नहिँ कढ़े मुख सरसिज तें बात॥
दीप दीप के दीप की दिपति दुहिन दुहि लीन।
समससि दामिनि भा मिले वा भामिनिकोंकीन।

जिनकी सरि दीप न लहैं तूलैं सीप न कोइ ।
स्यामकरन तकि बाम के काम उदीपन होइ ॥
लखि सुउदर रोमावली अली चली यह बात ।
नागलली मुरली करै मनु त्रिवली के पात ॥
तीछन ईछन बान ते भौंह कमानहि तानि ।
हरिहीहरिनहनै खरी तरुनि बधिक तजि कानि॥
वा दिन भाजे मुखनि को तुम नासों मुसुक्याइ।
ते राजे यह सुनि उठी सुमना सी विकसाय ॥
बार बार बरजी अरी बार बगारनवार ।
उर उरझो वा यार को को सुरझावनहार॥४५२॥
कुज गई न बिथा गई कुसुमित ताकि अतान ।
बहुरि दई दूनी भई लगे अतन के बान ॥४५४॥
मारि छलंक रहै अहे पारि रहे है चैन ।
ये न नैन हैं रावरे लसत मैन के येन ॥ ४५५ ॥
मेरो ही तो धाम है तो ही मेरो धाम ।
ये भेदन तें मोहि ह्वै नख-खत बेदन स्याम ॥
ऐसे चंचल जगत गत देखे सोधि न कोइ ।
मनु बिधि काढ़े दृग तुरग सुछबि पयोधिबिलोइ॥

सुरतनिसानीगाततकि सकुचत नहि समुहात।
चरवाही जानो करो वेपरवाही बात ॥ ४५८ ॥
मुरछि परी हाहा खरी यह जागी नहिँ नीठि।
कहि आली काली दस्यो नहि लागी हरिदीठि॥
इते चिते तूं कत खरी नहदी मिहदी नाहिँ ।
वे लोयन कोयन अरी प्रतिविम्वित दरसाहिँ ॥
यह सुनि जगपति पाय को अचरजवारी बात।
सोमन भूलो माँग में सूधेहू मग तात ॥ ४६१ ॥
सौरभ सुमन वरन लगे जरन उसीर पटीर ।
जेठ मास जलजन्त तें भारन दहनकन वीर ॥
घरहाइन की घेरु में रही गये घनस्याम ।
नैनन सैनन वैन के वार वगाखौ वाम ॥४६३॥
गई दावरी वावरी आई आतुर न्हाइ ।
तपनि तरलनैनी सही मोहित हफनि मिटाइ॥
हरिहियसृगुपगुरेख री वादिविदित सब ओक।
यह सुगरत परिगो अरी गड़त गड़त कुचनोक॥
मान विना सनमान नहिँ है यह लोकप्रमान।
तेरे जान सयान है मेरे जान अयान ॥ ४६६ ॥

काहू विधि हिमकर लहै या मुख समता नाहिँ।
उहिलखिकमलसुकाहिरीअरुयहिलखिबिकसाहिँ
अधरनि की लखि मधुरई पीय पियूष-पराय ।
सरदे कों सरदी चढ़ै दाख दुरै दुख पाय॥४६८॥
जग जोहनहीं के लिये दृगनि दिये करतार ।
मनमोहन छवि मोहनी सुनी सखिन सों बार॥
और गये कछु दिवस के ह्वै है लायक केलि ।
बनमाली बिकसन लगी रसमै सुबरन बेलि ॥
सासौ बात सुनी न तौ सकल सखीन लखी न ।
नहि सपनेहुँ मलीनहीं तन मन प्रीत मलीन ॥
आप करहिँ मनुहारि नहि वे न तजहिँ बलिरोस
इत उत दोसन नेकु दो एकु हमारो दोस॥४७२॥
हौं तो हौं गोरी खरी तुम कारे यदुराय ।
नहिँ हिरकै आवो कहूं या अँग रँग लगि जाय॥
मान किये अपमान पी हीन धरों री माष ।
लाख भरे अपराधहू लखि पूजे अभिलाष॥४७४॥
सद रद छद रद छद लगे नटि न लजीले बैन।
बसी रसीले सँग सही कहत नसीले नैन ॥४७६॥

एरी या ती के मुखै पूनो ससि सम जोइ ।
पर यामैं लखि मित्र कों सखि दूनो दुति होइ॥
वाल दरीचे विच लसै नीचे लाल विभाहिँ ।
अनमिषसेदुहुंकेनयन लखि अनमिष दरसाहिँ॥
सगरव गरव खिचैं सदा चतुर चितेरे आय ।
पर वाकी वाँकी अदा नेकु न खींची जाय॥४७८॥
कौन कहै वलि अमल से छकित अमल से हैन।
ए न रावरे कमल से चकित कमल से नैन ॥
सोक पुंज सों भरि रही नारि निकुंजनिहारि ।
विलखिगगनलखिसखिकही तोहिदयानतमारि॥
चामीकर चौकी रुचिर जड़ित जवाहिर जाल॥
जगर मगर दुति जगि रही तड़ित छवीली वाल॥
लै चुभकी निकसै धसै विहँसै अँगनि दिखाय ।
तकि २ चित चिहुंटै खरी ऐंड भरी अँगिराय ॥
कलरव करि झुकि श्रुति लगै रसगाहकचितचोर।
स्यामवरन सुन्दर सुखद कुंजविहारी भौंर॥४८३॥
लोल नैनि धारे लसैं अमल अमोल कपोल ।
तिनमैं तिल के छल वसैं गोलक स्याम अडोल॥

यौं सोभति सिति कंचुकी सुछबि कुचनिकी टून।
ज्यौ हलबी सीसानि के संपुट गेंद प्रसून ॥४८५॥
चन्दहार चम्पाकली काहि अली पहिराय।
फूलनिहूंके हार को भार सहो नहिँ जाय॥४८६॥
अँखियाअनमिषलेहुलखि चलनचहतघनस्याम।
निति रहिहो घनस्यामहीं रसवस आठो जाम॥
बिरहदहन लागी दहन घर न घरीक थिराति।
रहति घरी सी तो भई बूड़ति और तिराति ॥
वसन फटे उपटे सुवुक चिवुक ददोरे हाय।
चिहुंटन सुमनगुलाब कों अब मम जाय बलाय॥
लाल जगहि वाउर करो देहु कहा उर साल।
राउर सरल सुभाव है लखहु महाउर भाल॥
चलहु सिँगार कहा करो सहज हरो मन मैन।
ऐसेही नीके लगैं बिन काजर के नैन ॥ ४९१ ॥
समुझि भलीबिधि लखि ललो बेलिबलीरसछाक
भूलि अली न रली करै कनककली अरु आक॥
जबतें हरी लख्यौ अरी तवतें छरी दिखाय।
घरी घरी घर तें निकरि खरी खरी अकुलाय ॥

रुष रूषे भौंहें सतर नहि सोहें ठहरात ।
मानहित् हरि वात तें धूम जात लों जात ॥
वलि चलिके अव चाहिये चाह चढ़ी चित बाल ।
चिकनाई आई चषनि गई रुषाई लाल॥४६५॥
अवस अरस उपचार करि करि अव सरसउपाय ।
विन मनमोहन के दरस जी की लाइ न जाय॥
सखि लखि नन्दकिसोर सिर मोर मोरपर है न।
मनु सुमनसपति अकस सों सहस किये हैं नैन॥
चैत धसी जलधार मैं राध लसी ससि संग ।
सीत वसी वलि जेठ मैं नवनारिन के अंग ॥
भरे नेह सोहैं खरे निपट रहे मलिनाय ।
ल्याय पीतपट कों अहे असनारे लै जाय॥४६६॥
निकसिपरसिकलकूकिके तनहिँदियेकरिखाक ।
गिले पिये न टरे मरे तम काकोदरकाक ॥५००॥
पी पीछे यह सुनि लगे ही सर तीछे मैन ।
हार डारि हेरन लगी तरुनि तिरेछे नैन॥५०१॥
कुन्द मवा की सखि सुभा दसन निवारी जाय।
साँझ कि वेला रस पगी लगी मोगरे आय ॥

को कहि गारे लेय री को पारे यह लिम्ब ।
अधर निकारे बिन्दु नहि ये तारे प्रतिबिम्ब ॥
हौं चलि देउँ दिखाय कत चकित चितै चहु ठौर।
तेरे सँग वारी गई वा बारी की ओर ॥ ५०४ ॥
सुनि सखियनि तें आँगने खरे पीतपट आय ।
धाइ अनल की लपट सी रही हिये लपटाय ॥
उठि मिलि अतिआदर कियौ नेहनह्यौकहिवैन।
मान तिरोहित नहिँ रह्यौ तकि गति रोहित नैन॥
जोय न लीजे आरसी गोयन हाली हाल ।
लोयन कोयन रावरे लोयन लाली लाल॥५०७॥
मेरे चष चय सुख लहे तो तेरे तकि भाग ।
छल गुंजनि की माल कै झलकत पी-अनुराग ॥
निरखि बिमल पानिप पर्यौ नाभीनद ललचाइ।
अब किमि निकसि सकै अरी मीनभयौ मनजाइ॥
लखिहरिरुचिर गुरुजनसकुचि भईपिछौंड़ीनीठि।
दई निरदई नहिँ दई ईठि पीठि में दीठि ॥
स्याम तिहारे सीस की सौंह कहौं सति बानि।
चित्रसदन मैं ती परै पलक परे पहिचानि ॥

पेखि चन्दचूड़हि अली रह्यौ भली विधि सेइ ॥
खनखन खोटति नखनछद न खनहुं सूखन देइ ।
जो अतुलितगतिकान्हकी सोभुलितजत न नारि।
कत दृगमुकुलितकरतिहो प्रफुलितगातनिहारि॥
भये कठिन ये ठग नये नय न नयन के राज ।
रूप उदधि मैं लागि कै मारत लाज जहाज ॥
निसि अँधियारी मैं कहो क्यौं प्यारीहि मिलाइ।
मुखमयंक की दिनहुँ मैं जाइ उँज्यारी छाइ ॥
लंगर कों जीते जो करि रति-संगर जुग जाम ।
तातें अंग रहे भरे सुनि मुसुकानी वाम ॥५१६॥
वाहि चाहि चित रीझिहो सुनिये नन्दकिसोर।
निसिदिन भौर लगी रहै आनन तीर चकोर ॥
झँकि उझकै झाँकै उझकि लगी झरोखे ऐन ।
वाम भई छन जोति सौ नहिँ छन ईछन चैन ॥
जव लगि जाय वराय कै ल्यावौं केतक फूल ।
तव लगि न्हाय दुकूल कों सखि सुखाय या कूल॥
सीतलमन्द सुगन्ध चलि अनिलअखिलदुखदेहिँ।
चैत चैत को चन्द अलि चित चेतहि हरिलेहिँ॥

नै न बाल मानैं न री हारी कोरि सिखाइ ।
वा मुसुक्यानिसितानिमित दौरिनाहिँललचाइ॥
बरसाइत को वार है बर पूजन मिसु लाल ।
सुख वर बरसाने चहैं बरसाने की बाल॥५२२॥
चञ्चलता वे चषन सी झषनहुं माहिँ हरी न ।
ऐसे कौन हरीन हैं जासु छलंक हरीन ॥५२३॥
सपने मैं अपने निकट आये राति रसाल ।
लपटतहीं पट जगि उठी समुझि उठै नटसाल॥
केलि भवन कों गवन लखि चतुर सखी मुसुक्याय।
पियहिउढ़ायोपीतपट सितिपट तियहि उढ़ाय॥
पाय लगों छोरो न अब हायल नन्दकुमार ।
छूटतहीं घायल करैं छरकायल ये बार ॥५२६॥
छमा छमा सी छबि छनी-बनी छमासी बाल ।
छपे छपाकर ल्यायहीं छपा छबीले लाल ॥५२७॥
अली गली मैं कर धरे कही हरे हँसि नाहिँ ।
सो ही ते नहिँ उतरी चढ़ी पूतरी माहिँ ॥५२८॥
तपन-ताप तें चौगुनी बिरह-ताप सरसाइ ।
घन उसीर चन्दन छुहे छनहुँ न तन सियराइ ॥

यौं बाजूबँद मैं भली झबियनि झुमका झौंरि।
कनकलता मानहुं फली मरकत मनि की घौंरि॥
चाह तिहारी आह सों कुंजबिहारीलाल ।
हेम माल सी होति है हेम माल सी बाल ॥
नैन तिहारे नैन मैं मैं न कहौं कहै मैन ।
उतरत ह्वौ रातैं भये इत आतै समुहैं न ॥५३२॥
बनी सुवरनी उर बसौ पहुंची है चलि लेहु ।
जब मोहन माला बनै मोहि सुबनिता देहु ॥
अरुन नयन हैं रावरे अरुन कालि सी पाग ।
आज कहो कासों लरे खरे भरे नख-दाग॥५३४॥
वाह वाह नीकी बनी परतहिँ नेकु निगाह ।
डारि दियो चित चाह मैं तो ठोढ़ी की चाह ॥
पीरी पाती पावतै पीरी चढ़ी कपोल ।
कारे बदन बिलोकि मुदिता रे भई अबोल ॥
अँधियारी जामिनि खरी दुति लहि जगि२जाय।
लखि दामिनि घनस्याम के उर में लगि२जाय॥
निरखि कनखियनि चित कहति नित के आज
पिया न ।

सीलभरी अँखियनि नमित सोहैं चहति तियान॥
लाजभरी अँखियानि मैं चाहभरी चित माँह।
विबस परी है सुन्दरी खरी सखीजन जाँह ॥
सुखद सरद की कौमुदी भूषन भूषि जराइ ।
सुबरनबेली सी अली चली नवेली जाइ॥५४०॥
ढिग हिरकी घरकी बड़ी पी आये ससुरारि ।
नार नवाये लाज मैं जाति गड़ी नव नारि ॥
जीते चारु चकोर रुचि सुचि मनसिज सर पैन।
थारे अनियारे लसैं रतनारे ये नैन ॥ ५४२ ॥
हौं पुकारि कहि देति हौं मान न मानैं लोइ ।
हुकुम भवानी को भयौ ज्वारि न भानै कोइ ॥
बन्धुजीव लागैं मलिन भागैं बिम्ब प्रवाल ।
बालअधरकों लाललखि नलिनकुसितकुसलाल॥
छकी अछेह उछाह मद तनक तकी यहि बाँह।
दै छतिया छद छोभ हद गई छुवावति छाँह ॥
कोक-कला सी केलि कै सुरस-मई सरसाय ।
गई निसा न निसा भई बेलि रही लपटाय ॥
जबतें सुनी अनंग सी मूरति नन्दकुमार ।

तवतें रूप तरंग मैं पैरि न पावति पार ॥५४७॥
भलो कियौ तौ जौ पियौ चलो इहाँ ते नाह ।
हा सब सखियां पेखिहैं आसव अँखिया माह ॥
सजनी सज नीले वसन भूषन भूष न अंग ।
रजनी रज नीकी चली अली अली लै संग ॥
पवन परस तें झूलते वर अँचरो फहराय ।
चाहि सकुच हिय तिय खरी सकुचभरीमुसुक्याय॥
न्हाय वसन पहिरन लगी वस न चल्यौ चित दोर।
खाय मरोर खड़े गिर्यौ गड़े कड़े कुचकोर ॥
जऊ किये रुष रूषोई कहति कपट के वैन ।
तऊ नेह घट नहिँ दुरै प्रगट कहैं मुख सैन ॥
यौं श्रुतिभूषन भास मुख कलित मयूषन जोइ।
मनहु पियूषन कों घिरे ससि कों पूषन दोइ ॥
कहत जो सोतिसोहाग है तो जावक रुचि चाहि।
वजहिँ न ये विछिया कहैं छियाछिया सुनिताहि
कत मुकुरै मोतें दुरै नेह न नेसुक वीर ।
कहत तो मतन रोम ये खरे भरे दृग नीर ॥
उचके कुच उवरे चितै ढँपि आँचर सकुचाइ ।

मृगसावकनैनी निरखि जावक मृदुमुसक्याइ ॥
सो न कहो बूझति जो हों बात बदो बलि आन।
कहो सैन की जो कहैं सो न नैन लगि कान॥
चन्दकला कै चंचला कै चंपे की माल।
कै चामीकर की छरी सुछबि भरी कै बाल ॥
छनपरभा कै छल रही चमकि मार-करबार ।
बीरबधू कै व्याज री दहकत आज अँगार॥५५९॥
वे नैनन से आसवी मैं न लखे घनस्याम।
छकिछकि मतवारे रहैं तव छबि मद बसुजाम॥
रोम तने तन मैं घने स्वेदकने धन माथ ।
नीके नारी देखिये थरथरात हैं हाथ ॥ ५६१ ॥
क्यों न अँगारे देत रे मो मन जानि ससोक।
आँच तोहि नहि पाँच की तूं है साँच असोक॥
मोहि मनावन कों कहो क्यों बलाय ल्यौं लाल।
दहिगो तो जो हेरि हो बीती मोतीमाल॥५६३॥
घनगनबेली बनबदन सुमन सुरति मकरन्द ।
सुन्दर नायक औरवन दच्छिन पवन सुछन्द ॥
रहति चढ़ी चित चाय सो लोचन बङ्क नचाय।

अँगनि वँचाय अली गली चलौ जो लङ्क चलाय॥
कारी सारी जनि पहिरि हेरि पयोधर वोर।
मगहो में ससि ऊगिहै चलत प्रभंजन जोर॥
पूस मकारहिँ कहि कोऊ साँच मानिहै नाहिँ।
कहा कहों मुख इन्दु पै ये श्रमविन्दु सोहाहिँ॥
सुवदनि निचलाई निसा विकलाई लखि लेइ।
तजि मचलाई लाल कों गहन कलाई देइ॥
आनि इतै छन वारि दे छखि घनसार मसाल।
कौन काज तहँ राज जहँ सुधन वदन दुतिजाल॥
वैन करत हैं सैन सों चैन ऐन घनस्याम।
वनै पेन सर मैन के नैन जैन जग वाम॥५७०॥
लगे सोम कर तोम सर भई हिये वर घाइ।
कूक काकपाली दई आली लाइ लगाइ॥
विसद वसन महीन में तौ तन नूर जहूर।
मनु विलूर फानूस मैं दीपै दीप कपूर॥ ५७२॥
किहिविधिजाउँ वसन्तमैं विकसितवेलिनिकुंज।
मो मुख लखि चहुंवोर तें झुकत झपत अलिपुंज॥
गन्धवाह सीरे करैं हीरे ताप अछेह।

दई ताहु पर निरदई दाहत देह अदेह ॥५७४॥
बलि तिय हिय तें राग बढ़ि अधरनि रँगसरसाइ।
विद्रुम बिम्ब बँधूक की आभहि रहेउ बढ़ाइ ॥
बाल न चमकै चंचला है करवाल अनंग।
जलद-जाल घाले नये माते काल मतंग ॥५७६॥
बनी-बदन तें भरत हैं ये सुमना के फूल।
धनि सुसीलता मूल धन लगन धनी अनुकूल ॥
दलन लगी हरि नारँगी गुरजन बीच निहारि।
चष चलाय लै गागरी चली नागरी नारि॥५७८॥
ससि सो गोने जात कत यह आनन मलिनाइ।
इत उत हेरति हो कहाँ हीरो गयौ हिराइ ॥
खेदभरे तनसिज खरे करज लगे गन ठाम।
सुथरे कच बिथुरे अरी लरी ललन तें बाम ॥
अरुन चुनीन जड़ित ललित छिगुनी छोरसभाग।
लसत छला के छल लला यह ललना अनुराग॥
पट ना देरी लख न ऊ का समीर सुख देत।
करनाटक नैपाल की चढ़ि चलि कन्त निकेत॥

भोर चले सुनि लोर मन वाज भई बेताब ।
मालिनि वनमाली गले मेली माल गुलाब ॥
चुगि चितवनि चारा परचि गहे ढिठाई आय ।
हाँसी फाँसी परि सकै मन कुलंग न उड़ाय ॥
पी चूमे परवाल लखि वालहि गुरजन साथ ।
कचनि परसि बाहूं धरे कुचनि खरे पर हाथ ॥
जव वाकै रद की चिलक चमचमातिजिहिकोति।
मन्द होति दुति चन्द की चपति चंचला जोति॥
आज वनी औरै प्रभा उर कपोल पल भाल ।
औरै नयन पयन वयन मयन कियौ नँदलाल॥
गजराजनि के सीस चढ़ि निपट भुमाये वार ।
ते अब तेरे गर परे झूमत मुकुताहार ॥ ५८८ ॥
ईठिहु नीठि न लखि सकैं ढीठि ढिठाई ल्याइ।
गुरजन दीठिहि पीठि दै रही सु दीठि नचाइ॥
विरह आँच नहि सहि सकी सखी भई बेताब।
चनकि गई सीसी गयौ छिरकत छनकि गुलाब॥
त्रिभुवन सुखमा सार लै सोम सलिल सों सानि।
रवि ससि साँचे ढारि विधि रचे कपोल सुजानि॥

लखि कपास को नासरी बिलखि न धर हरि धार।
बिसनी अजहुं पलास हैं सखि सूखे कासार ॥
सीसी करि मुरि मुरि गई जिन पहिरत तूं बाल।
चूर चूर चित ह्वै गयौ तिन चुरियनि मैं लाल॥
इक तो हायल रहत हौं मायल ह्वै वा चाय ।
तापर घायल कै गई पायल बाल बजाय॥५८४॥
कच चिकने मेचक चटक चारु चिलक चितचोर।
छहरि रहे छबि छाय छुटि छुये छवा की छोर ॥
करत करी कर करभ कों अरु कदली सम तूल ।
जो कबि तेरे जानु सों सो अजानु मतिभूल ॥
पी पिक से निकसे बयन उर उकसे कुच दोइ ।
बलि बिकसे लोने नयन अब चिक से लगि जोइ॥
हरषित भई गई भयौ अधिक बधिक तें मार ।
नहिँ पायौ बन जा रतन लगे सिँगार अँगार ॥
कहति सखी सों मुदभरी हेरि हरी की आस ।
या निसि बन मैं सदन तें दुगुन दिखात प्रकास॥
गरज भरे बिलसत सरस सुछन छटा छहराइ ।
आये हैं घनस्याम री चाहि अटा चढ़ि जाइ ॥

बलि सुनिये गुनिये कहा कहत कहत मृदुबैन ।
नेह रचौहैं अब भये नेह नचौहैं नैन ॥ ६०१ ॥
आधी निसि नव पाहरू जिन आवै या गैल ।
किमि बाचै दिन चारि तें नाचै एक चुरैल ॥
अलि वेचन चलिहैं चलो सफल करहिँ रसनाहिँ ।
जो रस गोरस मों भलो सो रस गोरस नाहिँ ॥
बलि कुंजत हैं कोकिले गुंजत हैं अलि पुंज ।
तने वितान लतान के घने बने वन कुंज ॥६०४॥
मंजुल वंजुल मंजरी दरसाई जदुराय ।
पीर भई हौ सुधि गई तई मरोरे खाय ॥६०५॥
केतो हौं बरजति रहौं निचले नेकु रहैं न ।
हरि तन पानिप पी अरी भले पियासे नैन ॥
दरसि निसा यह दरस की दरसहिलागिउताल।
चली जाति सुवरन वली लीने चन्द मसाल ॥
कामिनिकानन कान हे मार कला रस हास ।
दृग मतवारे हित कनक कुंभनि डारे पास ॥
दरपभरी दरपन लिये ईठि खरी मुसुक्याय ।
दृगकोरन उर जन लखै गुरजन दीठि बचाय ॥

बलिहारी उतही रहो हाथ गहो जनि नाथ ।
हाथ हमारे कैत ह्वै देत तिहारे हाथ ॥ ६१० ॥
अब झांकिआँकिझसकिझुकी उझकि झरोषे ऐन।
कसे कंचुकी नरकसो लसी बसी ही नैन॥६११॥
गोये गोयन जाहिँ सो धोये तें न धोवाहिँ ।
भरी लाल लाली जु हैं लोयन कोयन माहिँ ॥
तो अबलों सुरलीन की को कबलों सिख देइ ।
लखि सुरली मृदुबोल सों अधरनि को रस लेइ॥
पहुँचल हार गली अली पहुँचि कही ब्रजनाथ।
कढ़त अँगनवां तें खसे कसे कँगनवां हाथ॥६१४॥
विधि वाजीगर निरमई तासों कुच ठहराहिँ ।
तो कटि हेरनहार री परसहु पावत नाहिँ ॥
रंगभवन प्रमुदित गई कौलि भई गति हाय ।
सेजहि जोहि तई दई काई असम सर घाय ॥
रिजु बृषभानुसुता लता तेजमान बृष भान ।
तुमहि कहो कैसे सहो सुन्दरस्याम सुजान॥६१७॥
बलि सब भाँति अलीक हो लीक कपोलन पीक।
अद अलीक पै रावरे जावक लीक अलीक॥६१८॥

ले लोयन लोयन लगी चितवनि लोयन लाय ।
तरुनि सिकारी ले गई मन लोयनहिँ लगाय ॥
ज्योंज्यों रूषी कढ़ति है बालबदन तें बात ।
त्योंत्यों प्रीति प्रतीति तें प्रीतमचित चिकनात॥
करि सिँगार सजिआभरन तजि रसना अरु हार।
रजनी-मुख सजनी चली अली लगे सर मार ॥
मो दिसि हेरि न हेरि री तजि सतरौहें बैन ।
रंच उचोहें करि इते चिते निचोहें नैन ॥६२२॥
भाभी बरसाने गई गई मायके माइ ।
सजनी सूने सदन में रजनी नींद न आइ॥६२३॥
स्याम इहीं नीठि न रुकै ढीठि तिहारी दीठि ।
बाम मनावो सुचित ह्वै कहि मुसुक्यानी ईठि॥
कुटिलाई तजि जानती तूं न सुधाई काम ।
सुनि याही सों गुनि धरे नाम विधातें बाम ॥
करन करत दिल कल न तिख सुमनसमीरनचाल
सिथिल भई नारी चले कुंजविहारीलाल ॥६२६॥
परी परी के बोजुरी अरी खरी जु निहारि ।
नरी हरी छवि की छरी मरी डरी यह नारि ॥

मुखहि अलक को छूटिबो अवसि करै दुतिमान।
बिन बिभावरी के नहीं जगमगात सितभान ॥
चारु चाँदनी चैत की चमचमाति तन भाति ।
कौनि अली उघरति दुरति चली गली में जाति॥
छनक दई मारी अरी कोइल ले इतराय ।
मृदुबैनी बोलन चहै अब मुसुक्यानि दिखाय ॥
बिकल परी बरि रहि खरी अरी जगावति काहि।
न जर नजर यह स्याम की नजर करी अब याहि॥
बिबरन आनन अरि गनी निरखि भँवारे भोर।
दरकि गई आँगी नई फरकि उठे कुचकोर ॥
घेरु सखीजन लखि ललै रोम उठे थहराय ।
तुरित लगी बीजन झलै नागरि नीर भिजाय॥
बिरहबरी सकुचनिभरी रहति खरी या गैल।
पल न लहति कल है अरी छरी छबीले छैल ॥
मान मुधा तजि बाल बलि बोलि खोलि मुख ऐन।
अधरसुधा लालचभरे लाल लालची नैन ॥
आधी निसि लों सीतकर रह्यौ बगारे लाइ ।
अहह दई आधी गई तारे गनत सिराइ॥६३६॥

सखि नख-रेख असेन लखि निलखि कियौ तियतेह
परत पाय पिय लाय हिय विहँसि उठी ससनेह॥
निसि जागे रागे नयन झूमत आये भोर ।
छिगुनी छोर छला लला लखि रहि खाय मरोर॥
पहिरे नगगन आभरन नेहनही नँदलाल ।
रंगमहल में वरि रही दीपमाल सी वाल॥६३९॥
भौंह उचै अँखिया नचै चाहि कुचै सकुचाय ॥
दरपन में मुख लखि खरी दरपभरी मुसुक्याय ।
ये चोखि लोयन लगैं लोय न मनसिज वान ।
ये लोयन लखि नहिँ लगैं लोयन लोयन आन॥
मनसिज दीरघ ताप री देत तपा लहि वीर ।
तापर हार हरेहरे हरहिँ हरी बिन धीर॥६४०॥
पूस वरुन दिसि कों अरुन ज्योंज्यों अथवन जात।
नवलवधू को मुख कमल त्योंत्यों वलि कुँभिलात॥
छवा छुये छहरत भली वलि वेनी छवि देइ ।
सुर गिरि तें चलि अलिअली कमलकली रसलेइ॥
माधव में माधव नहीं माते माधव पुंज ।
मनसिज निज डेरो कियौ मंजुल वंजुल कुंज ॥

हरिहि उपर सासी कसी मान मरोरन मारि ।
अधरसुधा सी है वसी खासी हासी नारि॥६४६॥
सुमन सिलीमुख धनुष लै कोपि हन्यौ भाषकेत।
धन अतूल छोभित भई तकि अतूल बन खेत ॥
ढीले अरसीले किये अँगनि छबीले सैन ।
प्रगट अली रसरँगरली कहत रँगीले नैन ॥६४८॥
कौनि अँधेरी राति मैं जाति चली चहि आइ।
पग पग पर जाके चले जगमग मग ह्वै जाइ ॥
कहन हुतो सो कहि चुकी अब न दुरति रतिबीर।
रस की मसकी कंचुकी कहत मरगजे चीर॥६५०॥
सहछापरिपछतायजनि हिय धरि ता बिपरीत ।
येरी लालहि ल्याय दौं करि मेरी परतीति ॥
हियलगायसिसुपियरह्यौ मुदित खेलाय दुलारि।
निरखिपरोसी दिसिपुलकि मृदुमुसुक्यानीनारि॥
धकधकात हौ गात मैं बन कन बाढ़ी स्वास ।
वापी धाय गई गई नहिँ पापी पी पास ॥६५३॥
खरी निदाघी दुपहरी तपनि भरी बन गेह ।
हहा अरी यह कहि कहा परी थरहरी देह ॥

नई लगन वन सों नहीं कुंजभवन कों जाति ।
सखि लखि दुति दूनी भई यह पूनो की राति॥
भोरहि चषनि चकोर कों धनिर दियौ अनन्द।
चाहि कियौ नँदनन्दमुख चन्द अहो सुखकन्द॥
कटो कटीली काँति पै लटी लटी अति जाय ।
जटी जटो अरि हरि घटी घटी सुदीपति जाय॥
केलि कलानि विना भरी वेलि विथानि सकेलि।
वीर वली अवली करी हगनि अँधेरी फेलि ॥
दिनहिँ देखि इत हों उतै अलप ननद को सैन।
मेरी तलप रतोंधिहे राही भूलि परै न ॥६५८॥
कवरीतर श्रमकनभरी कामिनि ग्रीवाँ भाय ।
मनु कादम्बिनि मेहभर दामिनि दमक दिखाय॥
चतुराई लिक चपलई धिक धिक कारे काग ॥
तोहि अछत निधरक रहैं कूकत पिक कुल वाग॥
मुकुतादिक गथ सों गथो मनमथ रथ सुविसेषि।
मति न थकी कहिकौनकी गति नथ की यह देखि
गोपलली कों लखि अली चली दली सी आय।
छली रली करि लाल री भली गली में पाय ॥

नीम कपास विकास पै विरमि करै कल गान।
कत मधुकर मधुमाधवी मधुर करत नहि पान॥
तकि २ तन मुसुक्याति है सुनि बानी रतिकेलि।
कोने में चलि जाति है बलि सोने की बेलि॥
सुनि सजनी सुरभान है अति मलान मतिमन्द।
पूनो रजनी में जु गिलि देत उगिलि यह चन्द॥
टीको कच ठग माँग मग मो मन राही पाय।
इक दिन में इक रैनि में लूटत धीर मताय॥
ललचाने लखि भीर मैं लालहि नागरि बाल।
बोरि सखी सारी दई दोरि सुघोरि गुलाल॥
मनिमय भूषन छोरहू दीप बुझायहू स्याम।
वा नवधन के वदन सों रहत उँजेरो धाम॥
मुरझानी नव वेलि सी ती जमुना के तीर।
निन्दति वीर प्रवाह कों खरी भरी दृग नीर॥
बिन पर उड़त रहैं अहे कौन कहे पतियाय।
उन नैनन खंजनि लिये मो मन उड़त बझाय॥
नखनमलिनरुचिहोतिरी नखननलिनदुति बाल।
अनख होत लखि सोति जी सनख होत ही लाल॥

जो जसुदा को लाड़िलो नै सो री जानै न ।
वन मैं वरजोरी करै वरजो री मानै न ॥ ६७३॥
ससकी नीली कंचुकी कुचनि भली छवि जोइ।
विकसति कली गुलाव की अली मनो ये दोइ॥
आज अहेरी नैन ये भये अहै री वीर ।
हरि मन कारसायल किये घायल चितवनितीर॥
ऐसी है सुकुमारता वा ती मैं जदुराय ।
मिहँदी-रँग के भार सों पाय सकै न उठाय ॥
मृगमदतिलक सुभाल की झाईं झाँकि कपोल ।
वाल कियो नँदलाल पै लाल लाल हग लोल ॥
छपे छपाकर चलि चहो वैसी खानि तियान ।
कान कुहूकू मैं कुहू वारन देय दिया न ॥६७८॥
अवतौ दिन रजके रहो विरह वरहि की गाय।
सुनि सजनी सुख तौ गयो मनभावन के साथ॥
काहि खोलिये यह हरी कैसे खोली जाइ ।
नहिं नीली चोली परी झलक अलक की आइ॥
जबलगि लखहि तचाय ले विधु सचाय ले ढूँढ़ि।
तबलगि यह ललना रही घूंघट मैं मुह मूंदि ॥

विरह-विकलता तें रह्यौ बालबदन पियराइ ।
सुनत अवाई लाल की गई ललाई धाइ ॥६८२॥
एक बली में बहु दली त्रिदित विधातैं कौन ।
चकित अली इक पात सैं त्रिबली चाहि नवीन॥
कलित अली नभचर लली लखहु अली हरसोग।
वलित बली वर तें तली ललित रली के जोग॥
जौ रंग न मैलो करो अंगन नेह लगाय ।
तौ बलि जाय उताल दौं लाल बसन कौं ल्याय॥
झलकै पग वनजात से झलकै मग बन जात ।
अहह दई जलजात से नैननि तें जल जात ॥
भौंहनि के वीचे न है यह मेचक तिल नारि ।
मनु दृग मृग पै मन्द है खींचे है तरवारि॥६८७॥
कुंज रूख दल सूख री खरी खरीहु न पाइ ।
निरखि उखरी उखरी खरी खरी बिललाइ ॥
इहाँ सुपास कहाँ अरे खेदभरे हैं बास ।
बात बगारे बास है वा नारे के पास ॥ ६८९ ॥
सुनि तो दीपति दीप लखि सिरधुनि र जरिजाय।
सुदति निहारे चाँदनी भूलि पछारे खाय॥६९०॥

नीवी वँधनि लसनि भली तकनि निचोही राज।
सब दिन सों नीकी बनी कसनि तनीकी आज॥
यह अटपट कैसे पटै लटपटाति रस नारि ।
इत आये मनुहारि उत करिवे हित मनुहारि॥
चख खींचे नीचे चहो भली भला कहि रीति ।
रंचक ऊँचे चाहि लो चन्द चलाकहि जीति ॥
दरसन सों परसन न है किमि पूजै मन काम ।
अब अरविन्द चढ़ाइये सुरधुनि धर पर स्याम ॥
रंच न देरि करहु सुरुख अब हरि हेरि परै न ।
विनय वयन मो सुनि भये सुरुख तरुनि के नैन॥
तनक चितै सजनी इतै वनक वनी ब्रजराज ।
इनकमलनिमोमुखकिये दिन रजनी ससिआज॥
निरखि अटारी पर खरी तकत हरी टकलाइ ।
सखि लखि प्यारी कों दई सिति सारी पहिराइ॥
कालि सकारे ही चले सजनी तिनके पास ।
इक दिन इक रजनी करैं जिनके नैन प्रकास॥
चहुंकित चकित चितै रही तापतई अकुलाइ ।
वर तरु मैं सजनी गई रजनी छाप लगाइ ॥

ताको वा तरु के तरे सुचित नचत है मोर ।
उतरिअपरद्विजगनमुदित ललित मचावत सोर॥
हौं बूझो कबरीन सों क्यौं कारी दरसाइ।
कही जो रवि सनमुख रहै सो कारो ह्वै जाइ ॥
दरस निसा दरसै नयौ उग्यौ राका चन्द ।
ता सुचन्द मैं जगि रहो चन्द अहो जगबन्द ॥
लगन नई बनि ठनि दई हाय गई धन धाय ।
छरी अपछरी सी भई सुमनछरी बन पाय॥७०३॥
वदन गयौ कुँभिलाय तन मदन कियौ सरघात।
सदन चली लिखि कै अली कूरम केतक पात॥
मोरी सौं जनि मान करि खोरी खोरी खोइ ।
सो हिय धरि जो पिय कहै तौ तेरे बस होइ ॥
मेरे और कपोल नहिँ अरु मैंहू नहिँ और ।
ईठि आज पी दीठि कौं दीठि और यहि ठौर॥
मुख देखन कौं पुरबधू जुरि आईं नँदनन्द ।
सबकी अँखिया ह्वै गईं घूंघट खोलत बन्द॥७०७॥
बसन लगी चितचातुरी हसन लगी सहसान ।
लोचन लागे कान लौं लोचन लागे कान॥७०८॥

मैं प्यारी हौं रावरी सो प्यारी नहिँ लाल।
जो चित छोभित करि करै नट मरकट की हाल॥
यह अचरज की बात सुनि को न अली पतियाइ।
दिनहिँ दरसि तम संग लै चली चाँदनी जाइ॥
हेरि हरो अचरज भरो कहति खरी करि सोर।
दिनहिँ तरनिजा तीर री कूजित मुदितचकोर॥
इन भृकुटिन की वार कों को न सकै सहि बाम।
सहन खरग की धार कों है हमारो ही काम॥
जात दिवस जलजात लों आवत कुमुद समान।
वा आनन सो फिरि नयौं कहियौ काननजान॥
जोवन लहि विकसित सुमन साजे सुखद सुवास।
केसरि सोभति पदुमिनी लिये अलीगन पास॥
आज हिये चन्दन कियौ अभिनन्दन नँदनन्द।
सखि वन्दै इत आनि कै यह जगवन्दन चन्द॥
सखि हरि राधा संग दिन चले विपिनकी ओर।
लखि अनन्द सों सोर करि दौरे मोर चकोर॥
जमुनातीर वलीन पै वस अलीन सँड़राइ।
सुनि चातुर आतुर चली छल वल ईठि उठाइ॥

आगे पाछे मचि रही खिचाखिची की ठान ।
बाल जान पी पैं भयौ भान जान मो जान ॥
चढ़े पयोधर कों चितै जात किते मति खोइ ।
छन मैं घन रस बरसि है रहौ बरोठे सोइ॥७१९॥
चाषन की ता छनि कहा अधर-अँगूर सुबाल ।
धरी रहैगी ताक पैं ताक तिहारी लाल॥७२०॥
चले पिया न अटक सुनी रही जञ जमुहाइ ।
तञ तिया मुख पैं गई चटक चौगुनी छाइ ॥
पियरुष लखि नागरि सखी कनककसोटी आनि
तियहिदिखाई लीक लिकि आईम्टदुमुसुक्यानि
अञ्ञी गई अब गरबई इकताई मुकुताइ ।
भली भईही अमलई जौं पी दई दिखाइ॥७२३॥
ज्यौं ज्यौं फूकै नवबधू पगी रसोई लागि ।
त्यौं त्यौं धूमै दै अहो लगी तमासे आगि॥७२४॥
तारे तरनि दुरे भये मुकुलित सरसिज दोइ ।
सखि प्रभात तमतोम मैं सोम सोहावन जोइ ॥
श्रीराधामाधव हमैं निति राखो निज छाँह ।
मेरो मन तुम मैं बसो तुम मेरे मन माँह॥७२६॥

कलित ललितई सतसई रामसहाय बनाय ।
हरि राधाहि नजर दई अजर लई रति पाय ॥

इति श्री भवानीदासात्मज रामसहायदास-जी कृत शृङ्गारसतसई सम्पूर्णम् ॥



॥ श्रीः ॥

# अष्टजाम ।

अर्थात्

मैनपुरीनिवासी प्रसिद्ध श्रीदेवकविजी ने श्री
राधामाधव के आठो पहर के विहार
का अपूर्व वर्णन किया है।

---

इस ग्रंथ को बड़े परिश्रम से खोजकर भा-
रतजीवन सम्पादक बाबू रामकृष्ण
वर्म्मा ने निज यंत्रालय से
छापकर प्रकाश किया।

---

काशी।

भारतजीवन प्रेस बनारस।

सन् १८९२ ई०।

प्रथम बार १०००] [मूल्य ≈)

श्रीगणेशाय नमः ।

# अथ देवकृत अष्टजाम .

सवैया ।

सराहैं सुरासुर सिद्धसमाज जिन्हैं लखि लाजत हैं रति मार । महामुद मंगल संग लसैं बिलसैं भवभार निवारनिवार ॥ बिराजै त्रिलोक निकाई की ओप मुनीसमनोहर रूप अपार । सदा दुलही बृषभानसुता दिन दूलह श्रीब्रज-राजकुमार ॥ १ ॥

दोहा ।

दंपति नीके देवकबि बरनत बिबिधि बिलास ।
आठ पहर चौंसठि घरी पूरन प्रेमप्रकास ॥२॥
प्रथम जाम पहिली घरी पहिले सूर उदोत ।
सकुचि सेज दंपति तजै बोलत हंस कपोत ॥

सवैया ।

रंगरात उठे अगिरात प्रभात उठैं अंग आ-लस की लहरैं । तिय पै पिय पास तज्यो न परै

बिछुरे हिय दोहुन के हहरैं । विथुरे यक वारहिं वार बड़े छुटिहारन ते मुकुता थहरैं । झलकैं छतिया पर ह्वै छलकैं सु बिछौननि पै छिति मै छहरैं ॥ ४ ॥

दोहा ।

उठि सुसेज तें दंपती सुरत रंग रस पागि ।
निरखत सोभा परसपर हरखत पुनि हियलागि ॥

सवैया ।

अजौं लगि होत तज्यौ तजिवे की भज्यौ तम देखि तज्यौ परजंक । निहारति आरति आरस सों दृग कोर चितै पिय ओर निसंक ॥ छुटी अलकैं अँखियाँ ललकै झलकै पलकै पगि प्रेम के पंक ॥ नई रति छाड़ गई गड़ि लाज लई मुख चूमि लला भरि अंक ॥ ६ ॥

दोहा ।

सरस परसपर के परस बरसत रँग सरसात ।
सुरतिखोज खोवत विमुख धोवत मुखदृग गात ॥

सवैया ।

पगी पियप्रेम जगी चहुं जाम रँगी रति

रंग भयो परभात। कियो न वियोग लियो भरि भोग पियो रसबोध हियो न अघात ॥ गुलाब लै लै बहुभांतिन सों छिरकै छतियां तन त्यौं न अमात। तजैं रंग ना रँग केसरि को अंग धोवत सों रँग बाहत जात ॥ ८ ॥

दोहा।

अंग धोइ भूषण पहिरि नूतन वेष बनाइ ।
ढढ़कतिचाहतिचल्यौचितचितवतिचितललचाइ॥

सवैया।

सब अंग अँगोछि उरोजन पोंछि कै अंबर चारु हरे पहिरे। गहने गहि नूतन मोतिनि के पहिले करि अंगनि ते बहिरे ॥ देव कहै दिन सो तिय दीन ह्वै दीरघ ह्वै न इहां गहिरे । सकुची जब पूछन कंत लग्यौ इन ओठन दन्त लगे गहिरे ॥ १० ॥

दोहा।

रंग महल ते कामिनो आई गुरुजनगेह ।
जाइ मिली दासी सखी उर उपजाइ सनेह ॥

सवैया।

सुख सेज के मंदिर ते गुरमंदिर सुंदरि आइ गई सुघरी। गुरलोगनि के पग लागति प्यार सों प्यारी बहू लखि सौति जरी ॥ कबि देव असीसत ईस करी तुम कोटि बरीस लौं सीस धरी। पिय के हिय में बसियो नितहीं बड़भागिनि भाग सोहाग भरी ॥ १२ ॥

दोहा।

गुरमंदिर ते सुंदरी सबको करि परनाम।
आयसु पाइ सु सबनि को आसन बैठी बाम ॥

सवैया।

लखि सासुहिं हास छपाइ रहै ननदी लखि जी उपजावति भीतहिं। सौतिनि सों सतराति चितौति जिठानिनि सों जिय ठानति प्रीतहिं॥ दासिनिहूं सों उदासिनि देव बढ़ावति नेम सों प्रेम प्रतीतहिं। धाइ सों पूछति बातें बिनै की सखीनि सों सीखै सोहाग की रीतहिं॥ १४ ॥

दोहा।

सहज भौन बैठी बहू बाढ़ी सहज बिलास ।
तहां आइवो लाल को आलिनि को परिहास॥

सवैया।

सोहै सलोनी सोहाग भरी सुकुमारि सखीनि समाज मड़ी सी । देव लला गये सोवत ते सुख माहँ सहा सुखमा घुमड़ी सी ॥ प्यारी की पीक कपोल मै पी के बिलोकि सखीन हँसी उमड़ीसी । सोहन सैंहं न लोचन होत सकोचन सुंदरि जाति गड़ीसी ॥ १६ ॥

इति प्रथम याम।

---

दोहा।

प्रथम घरी दूजे पहर बहू छोड़ि सब खेल ।
अँग उपटावति ओट गृह सोंधे सरस फुलेल ॥१॥

सवैया।

आइ हुती अन्हवावन नाइनि सोंधो लिये कर सूधे सुभाइनि । कंचुकि छोरि उतै उपटैवे

को ईगुर से अँग की सुखदाइनि ॥ देव सरूप की रासि निहारति पांय ते सीस लों सीस ते पाइनि । ह्वै रही ठौरहीं ठाढ़ी ठगी सी हँसै कर ठोढ़ी दिये ठकुराइनि ॥ २ ॥

दोहा ।

पहर दूसरे दूसरी घरी करै असनान ।
गौरि पूजि गुनगौरि वह देइ विप्र को दान ॥

सवैया ।

चंदन की वर चौकी पै वैठि जु न्हाई जुन्हाई सी जोति समूली । अंवर कै धर अंवर पूजि वरंवर देव दिगंवर सूली ॥ दानसनै मनि मानिक फूलिनि चंपक चारु लता मनो फूली । लेत वनै न विलोकत नैननि वापुरे वाह्मन की मति भूली ॥ ४ ॥

दोहा ।

घरी तीसरी दूसरे पहर गहर जनि होइ ।
भामिनिभोजनकरनकोअँचवतिसखिनिसँजोइ ॥

घनाक्षरी ।

सुचि सों सुचित चित रुचिर रसोइँ रची

ताके करता के पर वारों सुरबर रूष । सरस परस पर छरस परसि सुघराई सुथराई देखि देवज तजैं पयूष ॥ आसन बिमल बोलि बाल तहां वयठारि स्वाद लेत गई भरि भौंर को सी लघु भूष । सुधानिधिमुखी सब सुधानिधि कीन्ही नेकु अधर छुवाइ सुधानिधि से मुख मयूष ॥ ६ ॥

दोहा ।

पहर दूसरे तीसरी घरी घरी गति तेज ।
पान खाति दर्पन महल आवति सोंधी सेज ॥

कवित्त ।

भोजन कै भामिनी भवन बीच ठाढ़ी भई चूनी से चरन चारु चौकी रंग मेज पर । पन्नन के पानदान पानन की बीरी भरि नीरी करि दीन्ही लीन्ही मन की मजेज पर । फूलन के हार भरे भौंरन के भार देव आली पहिराये ते सोहाये तन तेज पर ॥ सौ सौ शशि को सो आस पासते उदोसो करि आइ बैठी सीसा के महल सोंधी सेज पर ॥ ८ ॥

दोहा ।

घरी पाँचई दूसरे पहर पहिरि पट सेत ।
मनि भूषन पहिरति नये सरस सुगंध समेत ॥

घनाचरी ।

दौरि आई दासी कलाधर सी प्रकासी कमलासी विमलासी नवलासी जिहिँ नवसरीर । कंचन कटोरनि मै चोवा भरि एकनि के एकैं लिये अतर गुलाव देव सीरो नीर ॥ उजरे जराउ जरे डब्बा भरि भरि ल्याई मोती मनि माल हीरा लाल लै लै राखैं तीर । एकै चित चाहि चहुंघा ते चुनि चुनि ल्यांई चंदन से चांदनी से चंद से रुचिर चीर ॥ १० ॥

दोहा ।

छठी घरी दूजे पहर फुलवारी विच वास ।
आवति संग सखीन लै ज्यौं फूली वनदास ॥

कवित्त ।

सूरजमुखीसी चंदमुखी को विराजै मुख कुंदकली दंत नासा किंसुक सुधारी सी । मधुप

सी नैन वर बंधुदल ऐसे होठ श्रीफल से कुचक चँवेलि तिमिरारी सी ॥ मोतीबेल कैसे फूल मोतिन के भूषन सुचीर गुलचाटनी सी चंपक के डारी सी। केलि के महल फूलि रही फुलवारी देव ताहू मे उज्यारी प्यारी फूली फुलवारी सी ॥ १२ ॥

दोहा।

घरी सातई दूसरे पहर सुबास सकाम ।
कुंजभवन पियको मिलति पहिरि फूलकी दाम ॥

सवैया।

कुंजगली ह्वै अली पठई वन गूढ़थली ह्वै लै आई सो नाहैं। देव जू दोऊ मिले जबहीं रसमेह सनेह नदी अवगाहैं ॥ फूलन के गहने लै दुहून के अन्तर मै पहिरावन चाहैं। लालन के गल मेलि सी राखति बाल सो चंपकबेलि सी बाहैं ॥ १४ ॥

दोहा।

पहर दूसरे बाग तें आवत मोहन भौन ।
राग सुनत अनुराग सो दरसन सरस सलौन ॥

कवित्त ।

दोऊ अनुराग भरे आये रागभौन भाग मघवा सची को लखि लागत सहल है । बैठे एक आसन पै एकै संग एकैरंग चल्यौ ना परत अङ्ग कोमल कहल है ॥ एकनि लै अतर लगायो देव दूहुनि के छिरकि गुलाब कियो वीजन वहल है । लै कै कर वीन परबीन सो अलापी आली मंजु स्वर पुंजनि सों गुंजत महल है ॥

इति द्वितीय याम ।

---

दोहा ।

पहर तृतीय घरी प्रथम दम्पति सुभग सकाम ।
जोवन मद आलस भरे आवत सीतलधाम ॥१॥

घनाक्षरी ।

सीतल महल महासीतल पटीर पङ्क सीतल कै लीपी भीति छिति छाती छहरैं । सीतल सलिल भरे सीतल विमल कुण्ड सीतल विमल जल धाराधर छहरैं ॥ सीतल विछौननि पै सी·

तल बिछाई सेज सीतल दुकूल पैन्हे पौढ़े हैं दुपहरैं। देव दोऊ सीतल अलिंगननि लेत देत सीतल सुगन्ध मन्द मारुत की लहरैं ॥ २ ॥

दोहा।

पहर तीसरे दूसरी घरी भरी अनुराग ।
भामिनि औ मनभावतो खेलन चौपरि लाग ॥

घनाचरी।

सेज ते उतरि बैठे फेन से बिछौननि पै मैन उमगाइ नैन चैननि ढरत हैं। रंगभरे अंग अरसौहैं सरसौहैं सौहैं सौहैं करि भौहैं रसभावनि भरत हैं ॥ कहूं चित कहूं हित कहूं चित हित बँधि दायन संभारैं चित चायनि लरत हैं। संपति के सागर वे दंपति सोहाग रँगे खेलैं सारि पासे पै तमासे से करत हैं ॥ ४ ॥

दोहा।

घरी तीसरी तीसरे पहर चित्रघर आनि ।
देखत मूरति सांवरी लिखी बिचित्र कलानि ॥

सवैया।

चित्र विचित्र विलोकन को पिय चित्र के मन्दिर सुन्दरि आनी। आपनी औ हरि मित्र की मूरति चारु चरित्र चितै सुखदानी ॥ त्यौं लखि लालन बाल को केलि देखाइ बिषै बिपरीति समानी। लाज के भार लची तरुनी बकुची बरुनी सकुची सतरानी ॥ ६ ॥

दोहा।

पहर आठई दंपतिहि हिये बढ़ाई प्रीति।
पच्छि भौन आये हँसत सुनत सबद रस रीति॥

घनाक्षरी।

हँसत हँसत चले चित्र ते विचित्र दोऊ जिन पर वारी देव देवी नर नारिका। मोरन के सोर पच्छिपाल और आये धाये लावक चकोर दौरि हंसनि की दारिका ॥ सारस सरस तूती तीतर परस्पर पींजरनि बीच बोली मंजुल वै सारिका। नाचैं सुक पोत सुकपोत पढ़ि पढ़ि उठैं लोकनि के मोहिबे को कोकनि की कारिका ॥ ८ ॥

दोहा ।

पांच घरी तीजे पहर दंपति उमगि सनेह ।
करत बड़ाई परसपर बरनत गुन दुति देह ॥

सवैया ।

आपुस मै रस मै रहसैं बिहँसैं बन राधिका कुंजबिहारी । श्यामा सराहति स्याम की पागहि श्याम सराहत श्यामा की सारी ॥ एकहिं दर्पन देखि कहैं तिय नीके लगौ पिय प्यौ कहै प्यारी । देव सुबालम बाल के साथ त्रिलोक मई बलि है बलिहारी ॥ १० ॥

दोहा ।

छठी घरी तीजे पहर दंपति हिलि मिलि एक ।
होत परसपर रंग पट पलटत प्रेम विवेक ॥ ११ ॥

घनाचरी ।

नैननि की जोरी सो बिराजै देव दंपति सु एकै अति मति एकै गति गहिरति है । देखिबे को है तन पै एकै मन एकै जन एकै काज एकै लाज छिन न रहति है ॥ प्यारी दूत प्यारे को

उतहि प्यारे प्यारी को निरंतर औ अंतर सो तेई वहि रति है। ताते स्याम रंग अंग स्यामा पैन्हे स्याम सारी श्यामारंग स्याम पटपीत पहिरति है ॥ १२ ॥

दोहा।

घरी सातहूं तीसरे जाम जात गुर गेह ।
बिछुरत तब सौतिनि निदरि सखीसराहत नेह ॥

सवैया।

प्यारे तिहारे के मोहिवे को सब सौति सिंगार करैं वहुतेरो । आपनो सो प्रनुहारि करैं मनुहारि निहारि सखी मुख तेरो। तेरे सोहाग के ऊपर वारिये औरनि को रंग राग घनेरो। देव निसाकर जोति जगै न लगै जुगनून को पुंज उँजेरो ॥ १४ ॥

दोहा।

तीन पहर पूरन भये पूरन प्रेम समाज ।
वरनति सखी सनेह सो पिय प्यारी को साज ॥

सवैया।

आंखिनि मे पुतरी ह्वै रहैं हियरा मे हरा

ह्वै सदा सुख लूटैं । अंगनि संग रहैं अँगराग ह्वै जीव मै जीवन मूरि ह्वै जूटैं ॥ देव जू प्यारे के न्यारे नये गुन मोमन मानिक ते नहि टूटैं। और तिया सो न तो बतिया नहिं मो छतिया से छिनौ भरि छूटैं ॥ १६ ॥

इति त्रितीय याम ।

---

दोहा ।

प्रथम घरी चौथे पहर बैठी गुरजन ऐन ।
छिनु छिनु परबत सो भयो काटे कठिन कटै न ॥

सवैया ।

बैठी बधू गुरलोगनि मै पिय के बिछुरे छिन भौन न भावै । पाछिलो जाम गयो जुग सो अब जामिनि क्योंकरि कामिनि पावै ॥ चौंकि चितै करि त्यों कबि देव सुबात नहीं दवि द्यौस गमावै । धाइ सो बैन सखीनि सों सैन सुमैन के चैन सो नैन नचावै ॥ २ ॥

दोहा ।

द्वितिय घरी चौथे पहर आई महल सिँगार ।
रंगमहल पठवै सखिन साजत सेज संवार ॥

घनाक्षरी ।

निपट उताहिल सो अति उतसाह भरी प्रेम मग मनोरथ चढ़ी अभिसार के। गौरव सों गोरी गुरजन की सभाते उठी लंक मैं लचनि परै कचनि के भार के ॥ चन्दन के अगर कपूर दै पठाइ सखी सुभ सेज सदन सँवांरन सँवांर के । संग लयें दासी देव कहै देवतासी आपु सुंदरि हँसति आई मंदिर सिँगार के ॥४॥

दोहा ।

घरी तीन चौथे पहर जो उबटाइ सरीर ।
सोंधो ते अन्हवाइ कै पहिरो पीरो चीर ॥ ५ ॥

घनाक्षरी ।

चोवा सों चुपरि केस केसर सुरंग अंग केसर उबटि अन्हवाई है गुलाब सों । अंतर तिलोंछि आछे अंबर लै पोंछि ओछि छतिया अगोंछि हँसि हँसि रस भाव सों । कटि मृगराज कैसी मुख है मयंक मानो तीखी दृग देव गति सीखी मृगसाव सों ॥ पैन्हें पीरो चीर चारु चौ-

की पर ठाढ़ी भई चांदनी सी प्यारी पै उज्यारी महताब सों ॥ ६ ॥

दोहा।

चौथि घरी चौथे पहर सौंधो बसन लगाइ ।
निरखि भूषन परत नहि तन दुति सोभन पाइ।

घनाचरी ।

अंबर अतर चोवा अंबर सो चुनि चुनि ल्याई सहचरी सौंधो जाति न्यारी न्यारी को । सुवरन संपुटनि आनी है रतन मनि पुहुप समूह देव आने बन क्यारी को ॥ मंद हास सुंदरी के भये सब मंद दुति चंदहू ते उदित अमंद दुति प्यारी को । पूनो सो नखत जाल नूनो सो मसाल पुंज सहजहिं दूनी दुति पून्यो की उज्यारी को ॥ ८ ॥

दोहा।

पांच घरी चौथे पहर पहिरति राते बास ।
करति अंग रचना बिबिधि भूषन भेष बिलास॥

घनाचरी ।

पंकज पायनि झँवाइ रंग जावक सुधारे

वर नेवर औ बिछिया सुभाय के। पैन्हो फेरि उजरी कै गुजरी रतन जरी बांधि कटि किंकिनी दमामे रतिराय के ॥ बैठी देखि दर्पन में कंचुकी रहसि कसी वार गुहे पैन्हें हार देव चित चाय के। अंजन दै नैननि अतर मुख मंजन कै लीन्हें उजराइ ऋार गजरा जराइ के ॥ १० ॥

दोहा ।

छठी घरी चौथे पहर कार गहि दर्पन देखि ।
रंग रंग भूषन जिते सोहैं अङ्ग विसेखि ॥ ११ ॥

घनाच्चरी ।

सोने से सुरंग सब वैसई लसत अङ्ग जग मग जोवन जवाहिर सो अङ्ग तास । रूप तरु कंठ काम कंदुक से सोहैं कुच चन्द्रमा सो आनन अमंद दुति मंद हास ॥ सोभा की निकाई देव काम की निकाई हूं ते नीके भये भूषन भ्रमर भ्रमैं आस पास । चौगुनी चटक तनचीर की चटकहू ते सौगुनी सुगन्ध ते सरीर की सहज वास ॥ १२ ॥

दोहा।

रह्यौ द्यौस जब है घरी साजे सकल सिँगार।
उदित ह्वै अभिसार को बैठी परम उदार ॥१३॥

घनाक्षरी।

सरस सुजाति अति सुंदर बरन तन बोलति मधुर महा कबिनि की बानी सी। तोरनि तिलक सो अलक पौरि चिलकति ध्वजा दृग मीन रतिराज रजधानी सी॥ रंभा औ तिलोत्तमा सुकेसी मंजुघोषा संग सदा उरबसी देव देवपति रानी सी। सकल सिंगार करि सोहै आजु सिंहोदरी सिंहासन बैठी सिंह बाहिनी भवानी सी॥ १४॥

दोहा।

पच्छिम पूरब भानु ससि अथवत उदवत भार।
रंग महल भामिनि चली भलीभांति अभिसार॥

घनाक्षरी।

मांग गुही मोतिन भुअंग ऐसी बेनी उर उरज उतंग औ मतंग गति गौन की। अङ्गना

अनंग कैसी पहिरे सुरंग सारी तरल तुरंग दृग चाली मृगदौन की ॥ रूप की तरंगनि बरंगिनि के अङ्गनि ते सोंधे की अरंग लै तरंग उठै पौन की । सखी संग रंग मै कुरंग नैनी आवै तौलों कैयौ रंगमई भूमि भई रंगभौन की ॥ १६ ॥

इति चतुर्थ पहर ।

---

दोहा ।

सांझ समै पहिली घरी तिय आवै रति धाम ।
दंपतिअतिगतिमतिमिलतसकुचतिसखिनसकाम

सवैया ।

दासी सखी कमलासी लिये सँग आइ गई अबला सुख साने । ता रँग भौन मै भावतो आयो उतै उठही सो महा हित ठाने ॥ नेकहिं के बिछुरे जुग से गये सोचत दोऊ सकोच समाने । सेज पै सोहैं जऊ मिलिबै कैतऊ मिलिबे को महा अकुलाने ॥ २ ॥

दोहा ।

राति जाति जब द्वै घरी बिरहातुर ह्वै पीय ।
मिल्यौचहत दूतसकुचअरु आलिनिनिरखततीय

सवैया ।

पान दियो हँसी प्यार सो प्यारी बहू लखि त्यौं हँसि भौंह मरोरी । बाह गही ललचाइ लला मुख नाहीं कही मुसकाइ किसोरी ॥ तोरि न लाज जेठानी सखी जन देव ढिठाइ करै नहि थोरी । लाल जितै चितवै तिय पै तिय त्यौं त्यौं चितौति सखीनि की ओरी ॥ ४ ॥

दोहा ।

तीनि घरी बीते निसा देखैं दंपति भाव ।
चतुरिअली मुरि मुरि चलीं सबहीं के चितचाव ।

सवैया ।

चितौत बनै नहि रंग की रैनि दूतै त्यौं चितौति सखीनि की न्याई । चुरैल ह्वै लागी अजौंलगि लाज सुकौलगि बांधे हिये मह जाई ॥ मनोज को ओज सहो न परै कवि देव रहो न

परे सकुचाई । चली रस बातैं भली यकवार चली मुख मोरि सखी मुसकाई ॥

दोहा ।

अरध जामजामिनि गये सखिनि सकुचि तरछाइ
देतिविदातियइतहिपियचितवतचितललचाइ ॥

सवैया ।

दीन्ही विदा मुसकाइ सखीनि को कीन्ही कछू भृकुटी भरि भालहिं । चातुरता चित बाढ़ी किशोरी के आतुरता लखि देव गोपालहिं ॥ सोहैं चितै अरसोहैं तिया तिरछोहैं हँसोहैं सवारति मालहिं । पैनी चितौनि सों चूरि कै चित्त सु दूरि भये ललचावति लालहिं ॥ ८ ॥

दोहा ।

पांच घरी जामिनि गये लखि उद्दीपन साज ।
पूरन तिपति सरस गति तजत परसपर लाज ॥

सवैया ।

चढ़ो नभ चंद वढ़ो सु अनंद कढ़ो सुख कान्द सु देव दृगंचलु । जप्यो रति रंग तप्यो

अति अंग थप्यौ पति संग चप्यौ चित चंचलु ॥
हितो कर मैन लियो रस मैन दियो सरमैन सँ-
भारि सचंचलु । मदै उनमाद गदै गुरनाद वदै
रसवाद दै दै मुख अंचलु ॥ १० ॥

दोहा ।

जब बीती छ घरी निसा बीते सबै उपाइ ।
छैल छबीली बाल को छाती लेत लगाइ ॥ ११ ॥

सवैया ।

लीन्हि उसास मलीन भई दुति दीन्ही फुंदी
फफुंदी की छपाइ कै । लागो सुधारन आँगो
बहू लखि देव गोपाल उठे अकुलाइ कै ॥ औ-
चकही उचि ऐंचि लई गहि गोरे बहै कर कोर
उचाइ कै । चंपकमालसी माल भुजानि मै
राखी सुजान हिये लपटाइ कै ॥ १२ ॥

दोहा ।

सरस भाव रसभावतो घरी गई निसि सात ।
बिबिधि रीति उपभोग रस पीवत पै न अघात ॥

सवैया ।

तोरी तनी अपने कर कंचुकी डारी उतारि

उतै पियही है। ऐपज पीड़सी मीड़त जो तिय तो लटसी लपटै पियही है ॥ ज्यौं ज्यौं पियै पिय ओठनि को रस देष त्यौं बाढ़ति प्यास तही है। चंपक पत्र से गातन मै न नखक्षत देत अ-घात नहीं है ॥ १४ ॥

दोहा।

प्रथम पहर बीते निसा करत सुरत सुख संग ।
सुभ सागर संसार मै सरस परसपर रंग ॥१५॥

कवित्त ।

गूजरी बजावरै बरसना सजावै कर चूरी छम-कावै गरो गहति गहकि कै। मुख मोरि त्योरी तोरि भौंहिं नासिका मरोरि देव ईंठी सीत्री करि बोलति बहकि कै ॥ अँखियां अधर चूमि हाहा छाड़ो कहै भूमि छतियां सो लगी लग लगीसी लहकि कै । कीन्हीं सुखसंग रसरंग मन भयो कोई औगुन दिखायो पिय दीठिहिं उहकि कै ॥ १६ ॥

इति पंचम जाम ।

दोहा ।

रैनि दूसरे जाम की प्रथम घरी सुरतन्त ।
रस उपजावति चतुर तिय करि करि भाव अनन्त॥

सवैया ।

हौस गँवाइ करी सुख केलि तिया तबही सब अंग सुधारे । तानि लियो पट घूंघुट मै झलकैं दृग लाल भरे झपकारे ॥ देव जू देखि लगे ललचान लला के कपोल कँपैं पुलकारे । मार मनौ सर सार के रोस कै एकही बार हजारक मारे ॥ २ ॥

दोहा ।

जाम दूसरे दूसरी घरी राति जब जाति ।
सुरत सराहत दंपतिहि लसति हँसति बहुभाँति॥

सवैया ।

ओट दै दै पहिरी अँगिया सिर चीर धरी अँचरा उर चाही । लाल गही ततकाल हियो भरि देव गोपाल गही गलबाही ॥ और जिये सुख लेऽब सराहत वै रति केलि सराहत जाँहीं ।

दीठि बचाइ चलाइ कै लोचन भौंह नचाइ करो हँसिहाँहीं ॥ ४ ॥

दोहा।

निसा दूसरे पहर की घरी जाति जब तीनि ।
प्रगटत प्रेम दुहूनि को बातन बिरह न कीनि॥

सवैया।

दोउ अङ्क भरे परजङ्क परे सुख नींद दबी तन मै तिय पै। पियप्यारी सो प्यारो कियो एक आस न देव अनन्त बढ़ो सुख पै ॥ जब प्यारो कहो तब आपनो प्यारी को राखी हमेल गरे हिय मै। तब प्यारी कह्यो बलिहारी करौं अपनो तनु हौं अपने पिय पै ॥ ६ ॥

दोहा।

डेढ़ पहर बीते निसा पूरन प्रेम बिलास ।
रस मै अनरस सो कछू होत हास परिहास॥७॥

सवैया।

रूप अनूप है एक तुही तिय तोसो न और मही महियां । कहुं होय हमारे कहा कहिये

तब तो हम सो मघवान हियां ॥ परजङ्क परे दोउ अङ्क भरे सु धरे सिर दोऊ दुहू बहियां । सुनि यौं भई भावती के सुख को छिन मै सुख बादर की छहियां ॥ ८ ॥

दोहा ।

पाँच घरी निसि पहर पर प्रेम कलह ह्वै जात।
रूठि रहति तिय मान कै रस मै रिस उपजात॥

सवैया ।

परिहास कियो हरिदेव सो बाम को बाम सो नैन नचे नट ज्यौं । करि तीखे कटाच्छ कृपान भये सु मनो रन रोस भिरो भट ज्यौं ॥ लचि लाइ रही खट पाटी करौंट लै मानौ महोदधि को तट ज्यौं । कटु बोल सुनो पटुता मुख की पटु दै पलटी पलटी पट ज्यौं ॥ १० ॥

दोहा ।

छठी घरी दूजे पहर जाति जामिनी बाल ।
प्रीति रीति सों जीति रीसि लेत अङ्क भरि लाल॥

सवैया ।

हँसि पीछे ते देव सुजान भुजान सो लीन्ही

लपेटि तिया भरि कै। सतरानी बहु रतिरानी सी लै अधरामृदु ऐंचि पियो भरि कै॥ तब रूसि सकी न भरी सिसकी सुर दीरघ सों अँसुवा भरि कै। अकुलाइ वियोग बिदा करि बाल लियो भरि लाल हिया भरि कै॥ १२ ॥

दोहा।

सात घरी दूजे पहर दम्पति रीति बढ़ाइ।
निन्दत दोऊ मान को मन ते कोप छोड़ाइ॥

घनाक्षरी।

जाको मुख देखतहीं देखत लहत सुख जाहि देखि देव नेकु साधन बुझाई री। तासो करि तीखी दीठि दै कै भौंहैं तानि अति जिय की वहाऊ वानि कहो कहां पाई री॥ कासों कहों कहा जानो कौने हरी मेरी मति न्यारी करी आनि पति प्यारी जो कहाई री। याके कहे मानि मान कियो मनभावते सो मै न जानो मेरो मन मोको दुखदाई री॥ १४॥

दोहा ।

अरधराति पूरन भई पूरन प्रेम समाति ।
पियप्यारी हिलमिलि जबै बिधि मति एकै भांति॥

घनाचरी

फूल की सी माल बाल लाल सों लपटि लागी तन मन ओट पट कपट कुपिलिगे। देखै मुख जियैं दोऊ दोऊ के अधर पियैं हियो हियो हाथन सौं यौं हित कै हिलिगे ॥ नैन लागे बैन लागे देव चित चैन लागे दुहुंनि के खेल खरे खेलहिं में खिलिगे । भरि कै सरस रस ढरि कै समाने जुग जाने ता परत जल बूंदहिं लौं मिलिगे ॥ १६ ॥

इति षष्टजाम ।

---

दोहा ।

दम्पति नाना भाइ के प्रीति करैं मन भाइ ।
राति तीसरे पहर की प्रथम घरी सुख पाइ॥१॥

घनाचरी ।

रूसन बिसरि गये हिलिमिलि एक भये

चित हित नये नित जिय जानियत हैं । प्रेम रस मगन उछाह उमगन भरे मनोरथ मगन ते पगन छियत हैं ॥ गातन में गात सह मारत न रत अङ्क विरह विहात नहीं बातन जियत हैं । जोरे मुख मुखही सो पोखे मनो ऊख रस अधिक मयूष ते पियूष से पियत हैं ॥ २ ॥

दोहा ।

पहर तीसरे दूसरी घरी रैनि की होति ।
कथत कथा दंपति तहां कछु जागत कछु सोति॥

घनाच्चरी ।

प्रेम के प्रसङ्ग भींजे रस रंग रंगदेव अङ्गनि अनङ्ग की तरङ्ग उमगति है । बरषत सुरस परसपर बरषत हरषत हिये हाँसी जिय मै जगति है ॥ स्वेद जल झलकत पल पल ललकत पुलकत तन औ विपुल नई गति है । हरे हरे हेरि हेरि हँसि हँसि फेरि फेरि कहानी के कहत कहा नीकी लगति है ॥ ४ ॥

दोहा।

पहर तीसरे तीसरी घरी राति जब जाइ ।
रस आरस मन मगन सों प्रीति रीति सरसाइ॥

घनाक्षरी।

कहति कहानी कछू उमगत जात हिये दं-
पति लहत सुख बिरह इतीत हैं। दुहूं मुखचंद
के चकोर भये दुवौ नैन कञ्जन के भोरे दोऊ
दुहुन हितीत हैं ॥ अङ्कन भरत दोऊ हौसन
भरत देव टूमत चिबुक चारु चूमत चितीत हैं।
गातन सँभारे रस बातन उचारें अधरारस पि-
यत अधरातन चितीत हैं ॥ ६ ॥

दोहा।

रैनि अढाई पहर गत पौढ़त हैं परजङ्क ।
दंपति सोवत जगि परत भरत अङ्क सों अङ्क ॥

घनाक्षरी।

पैज करि पौढ़ि परजङ्क मै मयङ्क सम सो-
वत निसङ्क अङ्क अङ्कनि उकसि उठैं । पलकैं
लगै न मूंदे बलकैं रहत तऊ लोचनऊ छलकैं

पै छलकै से ससि उठैं ॥ राखी ना रहति जज हँसी कसि राखी देव नेसुक उकासी मुख ससि से उलसि उठैं । उरनहीं डोलैं मन मनहीं कलोलैं करैं पुलकैं कपोलैं अनबोलहीं पै हँसि उठैं॥

दोहा ।

पाँच घरी तीजे पहर राति दम्पतिहिं जागि ।
पीवत आसव परसपर डोलत उर सों लागि ॥

घनाच्छरी ।

राजकुल रूपमद जोबन अनूप मद देव रस भूप मद छाके घने घूमि घूमि । सुरति बिसारि सारि गरे भुज डारि डारि डोलैं डरु डारि डारि भौन भौन भूमि भूमि ॥ चौंकि चितै देत हँसि हँसि देत हँसि महा सुख अंक भरि सुख देत दोऊ झूमि झूमि । आपुस मै आपु रसैं रूसैं रस राखैं मुंह सामुहें कै राखैं मृदु भाखैं मुख चूमि चूमि ॥ १० ॥

दोहा ।

रैनि तीसरे पहर कौ छ घरी मद सों छाकि ।
झुकिझुकि झूमत परसपर दंपति अतिमद थाकि॥

घनाक्षरी ।

जोवन के मद उनमद मदिरा के मद मदन के मद उमदार बरबस पर । भूलि भूलि बोलत हँसत मुख फूलि फूलि झूलि झूलि रहत सु बदन दरस पर ॥ देव कहै आपु औरै बूझत प्रसङ्ग आगे सुधि न सम्हारैं बूझि आनन्द परस पर । झपकि झपकि झुकि उठि बैठत हैं झूमि झूमि झुकि झुकि झूमि २ परत परसपर ॥१२॥

दोहा ।

सात घरी तीजे पहर रैनि महा रसमोइ ।
दम्पति अति आलस भरे जात गात लगि सोइ॥

घनाक्षरी ।

भारी रस भीजे भाग भायनि भुजनि भरे भावते सुभाइ उपभोग मोइगे । खेलतहीं खेलत अखेलतहीं आँखिनि सों खिनखिन खीन है खरेहीं खिन खोइगे ॥ मल्लिका मिलति परिमल मलयज लैकै मुदित अमोद मदिरा मद समोइगे । सीतल सुगन्ध मन्द झाँमुहें समीर लागे सुखद सुपाइ सुख सेज पर सोइगे ॥१४॥

दोहा ।

तीन पहर पूरन निसा सपने कन्त बियोग ।
होति बाल व्याकुल दशा बिरह बीज संजोग ॥

कवित्त ।

सँग सोवतहीं पियके मुखसों मुखसौं नहि योग वियोग सहै । सपने महँ स्याम बिदेश चले सु कथा कवि देव कहाँ लों कहै ॥ तिय रोइ सकी न सुनी ससकी हँसि प्रीतम त्यौं भरि अङ्क गहै । वड़भागी ललाउर लागी जऊ तिय जागी तऊ हिलकी न रहै ॥ १६ ॥

इति सप्तमयाम ।

---

दोहा ।

रैनि पहर चौथे घरी पहिली होत सचेत ।
नीदत सपनी नीद तजि वात नहीं सुख देत ॥

सवैया ।

नींदि भरे सपने महँ देखत है निजुवात नहीं सुख सों जव । सापनो के यह सो परतक्ष

जो देव विदेश को जान कह्यौ तब ॥ हाइ कहा कहौं भूलति नाहिन सूल सो सालत है उर मै अब । बैरिनि वै बतियाँ बिसुरी विसरै न अजौं बिसु रैन भई सब ॥ २ ॥

दोहा ।

घरी दूसरी रैनि को चौथे पहर समोद ।
विरह मिटावत दम्पती दुति देखत चहुँ कोद ॥

घनाक्षरी ।

उर सों लगाइ बन्धुरस की रसीली बानी मधुर सुधा ते बातैं सुनि वैसभाव की । कान परी कोकिला को काकली कलित जो कला-पिन की कूकैं कल कोमल बिराव की ॥ आइ गई झूकैं मन्द मारुत की देव नव मल्लिका मिलत सब मृदुल के दाव की । डाषली सुभग वास आषली नवल गृह मल्लिका के आस पास कलिका गुलाब की ॥ ४ ॥

दोहा ।

घरी तीसरी रैनि को चौथे जाम सकाम ।
प्यारे लखि प्यारी सकुचि होति उदास सुबाम ॥

घनाक्षरी।

परे परजङ्क पर परत न पी के कर थरहरे छुवत बिछौना पै करति है। चौकने चलिई जात अङ्ग लगे अँगिरात गाढै गहे ठहराति गूढ़ ह्वै ढरति है॥ त्रिमल बिलास ललचावति लला को चितै रोचत इतै को और उतहीं सरति है। पारद के मोती कैधों प्यारी के सिथिल गात ज्यौंहीं ज्यौं बटोरियत त्यौं त्यौं बिथरति है॥५॥

दोहा।

चारि घरी चौथे पहर रैनि रवन परवीन ।
पूंछि पहेली दाव रति आरति तिय रस लीन ॥

घनाक्षरी।

आतुर उताल अति चातुर चपल लाल सकुचित बालके उनींदे अङ्ग अलसात। ताही समै छैल छल कीन्हो है छवीली सङ्ग देव बिपरीति बसि बूझत पहेली बात॥ पूंछे जो पियारी ताहि जानत अजान पिय आपु पूंछी प्यारी को जताइ कै जिताइ जात। जीति बिपरीति

सो समुझि जिय फीको होत हारि हरि फीके ते हरख अति होत गात ॥ ८ ॥

दोहा।

चारि घरी चौथे पहर भई जो पिय पै जीति ।
अहंकार करि प्रेम सों करति सुरति बिपरीति ॥

घनाच्छरी ।

बांहन बिदाये बाहु जंघन जघन माहँ कहै छोड़ो नाह नाहि गयो चाहै मुचि कै । अम्बर उछरि छरि छरि झरि झरि झीने तार बार गे बिथुरि अरु हार गये उचि कै ॥ छतियां छुवाइ कैरी पीवै पिय के अधर सौर सुनि रसना रिसाइ ऊंचे उचि कै । फेरि फेरि जैहौ कहि नीके ते करैहौ कहि बैठि बैठि उठि उठि रंग रच्यौ रचि कै ॥ १० ॥

दोहा ।

तीनि घरी निसि भोर की करत परसपर बाद ।
उपजावत परिहास रस सोच सकोच बिबाद ॥

सवैया ।

दम्पति केलि करी बिपरीति सो आपनी

आपनो आँग विहूसै । रंग भरी अति ओरि पै आवती भावते के रस वादन दूसै ॥ देव जू दूल-है नीके हसे अरु पीके सँसे अंग मोरि मसूसै । और की वार सिवाइ कछू न खिसाइ खसै औ रिसाइ के रूसै ॥ १२ ॥

दोहा ।

रहै रैनि जब द्वै घरी जित तित निरखि प्रभात ।
वचनचातुरीकरतितियलखिपियजियपछितात ॥

सवैया ।

कै वहिकौ कुकुरा वहु कूर कि वाकी तिया कहुं काहू हनो है । बोलि उठै अधरा अधरा-तक सोति को हेत को खेत धनो है ॥ चाकर चोर के पाहरू खान कै सेही सिवा कैधौं फेर फनो है । सोइये श्रीघनस्याम घरीक न नैन उघारिये रैनि घनो है ॥ १४ ॥

दोहा ।

अरुन उदै तरुनी तरुन होत करुन रसलीन ।
कछू क्रोध कछु ईरषा कछू अधिक आधीन ॥ १५ ॥

सवैया ।

या चकई को भयो चित चीतो चितौति चहूं दिसि चाय सो नाची । ह्वै गई छीन कलाधर की छबि जामिनि जोन्ह मनो जम जाची ॥ बोलत बैरी बिहंगम देव सो सौतिनि के घर संपति साची । लोहू पियो जो वियोगिनी को सु कियो मुख लाल पिसाचिनि प्राची ॥ २६ ॥

दोहा ।

चौसठि घरी विचारि कै बरनि कही कवि देव । श्रीराधा मधुमाधवी मधु मधुकर श्री देव ॥ १ ॥

इति अष्टजाम ।